खंड 4
अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएँ

खंड 4 : अंतर्राष्ट्रीय तुलनाएँ

पाठ्यक्रम का खंड 4 विभिन्न विकास आयामों के अनुसार अंतर्राष्ट्रीय तुलनाओं को समर्पित है। इसमें चार इकाइयाँ हैं।

इकाई 11 संवृद्धि एवं संरचनात्मक परिवर्तन विषय पर है। इसका आरंभ 'कार्यबल के अंतर्क्षेत्रकीय अंतरण' में प्रवृत्तियों विषयक सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि से किया गया है। फिर भारत तथा कुछ अन्य देशों में संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक निरूपण किया गया है। इसमें भारत बनाम विकसित, विकासमान एशियाई तथा उदीप्यमान 'ब्रिक्स' राष्ट्रों के तुलनात्मक चित्रांकन किए गए हैं।

इकाई 12 एक तुलनात्मक अंतर्राष्ट्रीय सामाजिक एवं आर्थिक विकास चित्र प्रस्तुत कर रही है। सामाजिक आयाम शिक्षा एवं स्वास्थ्य अवस्था तथा आर्थिक आयाम प्रतिव्यक्ति जीडीपी एवं संरचनात्मक आयाम पर केंद्रित है। फिर 'विकास के अभावों' का तुलनात्मक निरूपण गरीबी, विषमता और बेरोज़गारी की कसौटियों के आधार पर किया गया है। HDI, SPI तथा WHI जैसे मानव विकास, सामाजिक प्रगति और विश्व सांख्य जैसे सूचकों के विकास पर भी यहीं संक्षिप्त तुलनात्मक चर्चा की गई है।

इकाई 13 व्यापार एवं भुगतान शेष पर है। यह (i) ''भुगतान शेष खाते के घटकों''; (ii) ''भुगतान शेष के अतिरेक और घाटे'', तथा (iii) ''चालू खातें पर घाटा'' (CAD) जैसी संकल्पनाओं की व्याख्या से प्रारंभ की गई है। फिर विकसित एवं विकासशील देशों के CAD में तुलनाएँ की गई हैं। भारत में पूँजी खाता उदारीकरण प्रयासों की रूपरेखा तथा CAD के प्रभावों को भी इसी इकाई में समझाया गया है।

इकाई 14 प्रशासन और संस्थाओं की भूमिका पर है। यह सरकार और प्रशासन की संकल्पनाओं से आरंभ की गई है। सुशासन के तत्वों की पहचान की गई है। फिर इसके आर्थिक एवं सांस्थानिक आयामों को स्पष्ट करते हुए प्रशासन के घटकों की व्याख्या की गई है। फिर अंतर्राष्ट्रीय तुलनाओं के लिए विकसित 'प्रशासन सूचकों' के बार में जानकारी दी गई है।

इकाई 11 संवृद्धि एवं संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन*

संरचना

11.0 उद्देश्य

11.1 विषय प्रवेश

11.2 कार्यबल का अंतर्क्षेत्रीय स्थानांतरण : सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि एवं रुझान

11.3 संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन : भारत बनाम विकसित देश

11.4 संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन : भारत बनाम अन्य विकासशील एशियाई देश

11.5 संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन : भारत बनाम विकसित एवं ब्रिक्स अर्थव्यवस्थाएँ

11.6 सार-संक्षेप

11.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

11.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि :

- कार्यबल के अंतर्क्षेत्रीय स्थानांतरण विषयक सैद्धांतिक अंतर्दृष्टियों पर चर्चा कर सकें;
- भारत में कार्यबल के अंतर्क्षेत्रीय स्थानांतरण में रुझान की तुलना उसी विषय में सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि से कर सकें;
- भारत और विकसित देशों के बीच संरचनात्मक परिवर्तनों का एक तुलनात्मक वर्णन प्रस्तुत कर सकें;
- अन्य विकासशील एशियाई देशों के साथ भारत के एक तुलनात्मक वर्णन में सकल घरेलू उत्पाद के अंशों में अंतर्क्षेत्रीय स्थानांतरणों को स्पष्ट कर सकें;
- 'ऋण व सकल घरेलू उत्पाद अनुपात' एवं 'अनुपयोगी ऋण' को परिभाषित कर सकें और हाल के वर्षों में प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं में उनके रुझान इंगित कर सकें; तथा
- विश्व, अन्य विकसित देश एवं ब्रिक्स अर्थव्यवस्थाओं के साथ एक तुलनात्मक वर्णन में हाल के वर्षों 2010–16 में भारत की संवृद्धि दरों में रुझानों का वर्णन कर सकें।

11.1 विषय प्रवेश

आर्थिक विकास की प्रक्रिया ऐतिहासिक रूप में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं में संरचनात्मक

* डॉ. असीम कर्माकर, जादवपुर विश्वविद्यालय, एवं प्रो. बी.एस. प्रकाश,इग्नू

परिवर्तन से जुड़ी है। संरचनात्मक परिवर्तन का अर्थ है– प्राथमिक क्षेत्र से द्वितीयक एवं तृतीयक क्षेत्र की ओर सकल घरेलू उत्पाद एवं श्रमिक बल के अंशों में स्थानांतरण। संरचनात्मक परिवर्तन न केवल आर्थिक विकास के लक्षणों का वर्णन करते हैं बल्कि आर्थिक संवृद्धि को कायम रखने के लिए आवश्यक भी माने जाते हैं। कुज़नेट्स व अन्य ने दर्शाया है कि धारणीय संवृद्धि कार्यबल के क्षेत्रीय संयोजन में परिवर्तनों द्वारा लाई जाती है। किसी भी अर्थव्यवस्था की संरचना में परिवर्तन न केवल किसी वृद्धि दर का परिणाम होंगे बल्कि यह विकास की प्रकृति पर भी निर्भर करता है (जैसे– मानव विकास, समावेशी विकास)।

11.2 कार्यबल का अंतर्क्षेत्रीय स्थानांतरण : सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि एवं रुझान

फिशर (1935), क्लार्क (1946), चेनरी (1960) एवं कुज़नेट्स (1971) के पुरोगामी ग्रंथ दर्शाते हैं कि विकास के आरंभिक चरणों में, उत्पादन और रोज़गार दोनों में कृषि का अंश अत्यधिक सशक्त रूप से विशाल रहा है। परंतु जैसे-जैसे औद्योगीकरण होता जाता है, आय में कृषि क्षेत्र का अंश घटता जाता है। एक बार जब देश यथेष्ट रूप से उद्योगीकृत हो जाते हैं और आर्थिक विकास की उन्नत अवस्था में पहुँच जाते हैं तो उद्योग का अंश भी घटता है जबकि सेवाओं/तृतीयक क्षेत्र का अंश बढ़ता है। किसी अर्थव्यवस्था में आय के एक यथेष्ट रूप से उच्च स्तर पर पहुँच जाने के बाद, सेवाओं हेतु माँग में वृद्धि की दर तेज़ी से बढ़ती है। ऐसा इसलिए है कि सेवाएँ कृषि एवं औद्योगिक क्षेत्रों की वस्तुओं हेतु माँग की अपेक्षा अपनी माँग की एक उच्चतर आय की लोच दर्शाती हैं।

रॉथार्न एवं वैल्स (1987) वर्तमान उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में रोज़गार अंश में बदलाव की दृष्टि से संरचनात्मक परिवर्तन के प्रतिमान का एक ऐसा ही विवरण प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने पाया कि आधुनिक आर्थिक संवृद्धि कुल रोज़गार में कृषि के अंश में गिरावट से जुड़ी होती है जो ग़ैर-कृषि क्षेत्रों में लगे श्रमिकों के अनुपात एवं संख्या दोनों में वृद्धि ला देती है। ग़ैर-कृषि क्षेत्र में औद्योगिक क्षेत्र के साथ-साथ वाणिज्यिक, सरकारी एवं निजी व पारिवारिक सेवा (PHS) क्षेत्र भी शामिल होते हैं। विकास की प्रथम अवस्था में, जिसे औद्योगिक चरण कहते हैं, कुल रोज़गार में कृषि का अंश घटना चालू रहता है और एक घरेलू निजी सेवा क्षेत्र उठ खड़ा होता है। जब तक कृषि में लगे श्रमिकों का आधिक्य और घरेलू निजी सेवाओं में श्रमिकों की पर्याप्तता दृष्टिगत होती है, ग़ैर-घरेलू सेवाएँ उद्योग के अंश को प्रभावित किए बिना ही कुल रोज़गार में अपना अंश बढ़ा सकती हैं। परंतु अंततोगत्वा, ग़ैर-घरेलू सेवाओं के अंश में कोई भी महत्त्वपूर्ण वृद्धि औद्योगिक क्षेत्र के अंश में कमी लाएगी। उद्योग के अंश में गिरावट और कुल रोज़गर में सेवाओं के अंश में वृद्धि को रॉथार्न एवं वैल्स (1987) ने विकसित देशों में 'अनुद्योगीकरण' के चरण की संज्ञा दी।

सेवा क्षेत्र गतिविधि का महत्त्व वर्ष 1970–1989 की अवधि में 123 ग़ैर-समाजवादी देशों के एक प्रतिदर्श के अध्ययन में उभरकर आया [कॉन्गसैमट, रिबैलो एवं ज़ाई (2007)]। इस अध्ययन में ध्यान दिलाया गया है कि जैसे-जैसे कोई अर्थव्यवस्था परिपक्व होती है, उत्पादन और रोज़गार दोनों में, कृषि क्षेत्र का अंश घट जाता है। इस गिरावट के साथ ही उत्पादन और रोज़गार में सेवाओं के अंश में वृद्धि देखी जाती है। अतः, जैसे. जैसे देश विकास करते हैं, सेवा क्षेत्र के आर्थिक गतिविधि के अंश में वृद्धि होती है। वस्तुतः, वर्ष 2016 में विश्व सकल घरेलू उत्पाद का 70 प्रतिशत सेवा क्षेत्र ने ही दिया

है। वर्ष 1950 से 2005 की अवधि में विकसित एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के एक प्रतिनिधिक अंश विषयक आँकड़ों का प्रयोग कर, आइशनग्रीन एवं गुप्ता (2009) ने सेवा क्षेत्र संवृद्धि की दो तरंगों को पहचाना– प्रथम तरंग जब कोई देश 'निम्न' से 'मध्यम' आय की ओर बढ़ता है तथा दूसरी तरंग जब कोई देश 'मध्यम' से 'उच्च' आय की ओर बढ़ता है।

भारत के उदाहरण में, सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का अंश वर्ष 1950-51 में 60 प्रतिशत से घटकर वर्ष 2002 में 24 प्रतिशत और तदोपरांत वर्ष 2015 में मात्र 17 प्रतिशत रह गया। औद्योगिक क्षेत्र ने अपना अंश वर्ष 1960 में 16 प्रतिशत से बढ़ाकर वर्ष 2002 में 25 प्रतिशत कर लिया, परंतु उसके बाद यह वृद्धि धीमी पड़ गई (वर्ष 2015 में केवल 25.8 प्रतिशत पर पहुँच कर)। दूसरी ओर, सेवा क्षेत्र का अंश वर्ष 1960 में 21 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2002 में 51 प्रतिशत और वर्ष 2015 में 57 प्रतिशत हो गया। भारत और विकसित एवं उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं के बीच अंतर यह है कि जबकि अधिकांश परवर्ती अर्थव्यवस्थाएँ सेवा क्षेत्र की प्रधानता के सोपान में प्रवेश कर गयीं– कृषि की प्रधानता से क्रमिक रूप से बढ़ते हुए पहले विनिर्माण और फिर सेवाओं में, भारतीय उद्योग इस प्रकार का रुझान दर्शाने में विफल रहा। वह अपने औद्योगिक क्षेत्र संबंधी विस्तार में निष्क्रिय रहा परंतु सेवा क्षेत्र के एक महत्त्वपूर्ण विस्तार की ओर उसने ऊँची छलाँग लगाई। क्या यह रुझान भारत के लिए अद्वितीय था अथवा क्या किसी अन्य अर्थव्यवस्था ने भी इसका अनुसरण किया है? यह एक ऐसा पहलू है जिस पर हम अगले भाग में विचार करेंगे।

11.3 संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन : भारत बनाम विकसित देश

वर्तमान विकसित देशों में संरचनात्मक परिवर्तनों का ऐतिहासिक प्रतिमान लगभग 100 से 150 वर्ष पुराने क्षेत्रीय संरचना की भाँति ही वह अवस्था दर्शाता है जो भारत अपनी स्वतंत्रता प्राप्ति के आरंभ में दर्शाता था। कहना होगा कि आज के अधिकांश विकसित देश, वर्ष 1900 के आस-पास, कृषि द्वारा उल्लिखित सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 60 प्रतिशत के साथ अपने औद्योगीकरण में प्रवेश कर गए थे। इन अर्थव्यवस्थाओं में उद्योग एवं सेवाओं ने क्रमशः लगभग 13 और 27 प्रतिशत का योगदान दिया। तद्नुसार, वर्ष 1950 में भारतीय अर्थव्यवस्था संरचनात्मक रूप से अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में ग्रेट ब्रिटेन, वर्ष 1900 में जापान, उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में जर्मनी और उन्नीसवीं शती-मध्य के अमेरिका एवं इटली की अर्थव्यवस्था के समतुल्य थी। इसी प्रकार की तुलनाएँ तीन अग्रणी क्षेत्रों में श्रमिक बल के अंश की दृष्टि से सही सिद्ध होती हैं, जिनमें वर्ष 1950 में भारत कृषि में 73 प्रतिशत, उद्योग में 11 प्रतिशत और सेवाओं में 16 प्रतिशत के सापेक्ष अंश दर्शाता था। इसकी तुलना वर्ष 1841 के अमेरिका से की जा सकती है जबकि वह कृषि में अपने श्रमिकों का लगभग 72 प्रतिशत, उद्योग में 12 प्रतिशत एवं सेवाओं में 16 प्रतिशत लगाता था, अथवा वर्ष 1880 के जापान से, जहाँ उक्त तीन क्षेत्रों में रोज़गार के अंश क्रमशः रहे– 65, 15 एवं 20 प्रतिशत। वर्तमान विकसित देशों में देखे गए आर्थिक संरचना में परिवर्तनों के ऐतिहासिक प्रतिमान से ज्ञात प्रमुख अभिलक्षण निम्नलिखित हैं –

1) सभी विकसित देशों ने अपनी विकसित होने की स्थिति प्राप्त करने से पूर्व कृषि-प्रधानता वाली अपनी आर्थिक संरचना में एक सदृश अनुक्रम का पालन किया;

2) अधिकांश विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाओं की संरचना इस अर्थ में सदृश है कि अपनी विकसित अवस्था में प्रत्येक देश अपने राष्ट्रीय उत्पादन में पहले कृषि का अत्यल्प अंश, फिर उद्योग का किंचित् अधिक अंश और फिर सेवाओं का काफी अधिक अंश दर्शाता है; तथा

3) प्रत्येक क्षेत्र के रोज़गार का अंश उस क्षेत्र के उत्पादन अंश के साथ ही चलता है, अर्थात् सेवा क्षेत्र में रोज़गार का उच्चतम अंश, उद्योगों का एक मध्यम अंश और कृषि का निम्नतम अंश।

विगत अर्ध-शती की अवधि (1951–2004) में भारत ने अपने आर्थिक विकास में संरचनात्मक परिवर्तनों के उसी प्रतिमान का अनुभव किया जो आज की विकसित अर्थव्यवस्थाएँ 100 से 150 वर्ष पूर्व की अवधि में कर चुकी थीं। सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का अंश वर्ष 1950–51 में लगभग 60 प्रतिशत से गिरकर वर्ष 2016–17 में 17 प्रतिशत रह गया, जहाँ सदृश अवधि में उद्योग का अंश 13 से बढ़कर 29 प्रतिशत हुआ और सेवाओं का क्षेत्र 28 से बढ़कर 54 प्रतिशत हो गया। परिवर्तन का यह प्रतिमान अर्ध-शती की अवधि भर में निरंतर रहा, परंतु परिवर्तन की गति वर्ष 1990–91 से अपेक्षाकृत तीव्र रही है। प्रथम चालीस वर्षों में कृषि के अंश में 60 प्रतिशत से 35 प्रतिशत की गिरावट देखी गई जबकि अगले 25 वर्षों में यह 35 प्रतिशत से घटकर मात्र 17 प्रतिशत रह गया। दूसरी ओर, सेवाओं का अंश प्रथम 40 वर्षों में 28 से बढ़कर 40 प्रतिशत हुआ और अगले 25 वर्षों में 40 से बढ़कर 54 प्रतिशत हो गया। सकल घरेलू उत्पाद में उद्योग का अंश जो वर्ष 2003–04 तक निष्क्रिय रहा, अब वर्ष 2016–17 में 29 प्रतिशत के स्तर तक पहुँच गया है।

तिस पर भी, हाल में (ढाई दशक के दौरान) भारतीय अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन का सर्वाधिक विस्मयकारी अभिलक्षण रहा है– सेवा-क्षेत्र का उत्कर्ष, जिसने राष्ट्रीय आय में अपना अंश और तेज़ी से बढ़ाया है। उद्योग, विशेषकर विनिर्माण, जिसे ऐतिहासिक रूप से आर्थिक विकास की कम से कम आरंभिक अवधि में, संवृद्धि के प्रमुख सहयोगी के रूप में देखा गया है, ने भारत के आर्थिक विकास में एक लघु भूमिका ही निभाई है। जबकि विकसित देशों ने औद्योगीकरण के एक प्रमुख चरण से गुज़र कर ही अपनी अर्थव्यवस्थाओं में सेवा-प्राधान्य के चरण में प्रवेश किया, जहाँ उद्योग ने अर्थव्यवस्था में 50 प्रतिशत के अंश हासिल किया, भारत का उदाहरण भिन्न है। भारत बिना औद्योगीकरण के एक उत्तर-औद्योगिक 'सेवा अर्थव्यवस्था' की ओर कदम बढ़ा चुका है। किसी अर्थव्यवस्था के ऐसे द्रुत एवं ऐतिहासिक पारगमन, यथा औद्योगिक विकास को लाँघकर कृषि से सीधे एक सेवा अर्थव्यवस्था में प्रवेश, को दो मोर्चों पर स्पष्ट किया जा सकता है। प्रथम, विगत कुछ दशकों के दौरान प्रौद्योगिकीय सुधारों ने तमाम देशों में सेवाओं हेतु बढ़ती माँग की ओर प्रवृत्त किया है, वह भी प्रति व्यक्ति आय के साथ तुलनात्मक रूप से निम्न स्तर पर। संचार प्रौद्योगिकियों के विकास एवं देशों के बीच लोगों के आवागमन ने प्रदर्शन प्रभाव उत्पन्न किया है, जिससे विकासशील के साथ-साथ विकसित देशों में भी माँग का सदृश प्रतिमान देखने में आया है जिसने सेवाओं हेतु वृहत्तर माँग की ओर प्रवृत्त किया है। परिणामतः, सेवाओं हेतु माँग की लोच अपेक्षाकृत निम्न प्रति व्यक्ति आय स्तरों वाले देशों तक में इकाई से कहीं अधिक हो गई है। इसने राष्ट्रीय उत्पाद में सेवाओं के योगदान को वृद्धि की ओर प्रवृत्त किया है। दूसरे, अर्थव्यवस्थाओं के बढ़ते खुलेपन और उनमें व्यापार द्वारा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाए जाने से, माँग प्रतिमान में परिवर्तन व्यापार के माध्यम से लाए जाते हैं। व्यापार ने, तद्नुसार, सेवाओं द्वारा उद्योगों के पास से होकर गुज़र जाने में एक प्रेरक शक्ति के रूप में काम किया है।

बोध प्रश्न 1 (दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।)

1) सर्वप्रथम, प्राथमिक से उद्योग और फिर परवर्ती चरणों में उद्योग से सेवा क्षेत्र में आय के क्षेत्रीय पारगमन विषयक सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि हेतु अंतर्निहित कारण क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) रॉथॉर्न एवं वैल्स द्वारा प्रयुक्त पदबंध 'अनुद्योगीकरण' से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) वर्ष 1960 से 2015 की अवधि में सकल घरेलू उत्पाद में अपने क्षेत्रीय अंश की दृष्टि से भारत का क्या अनुभव रहा है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) वे सामान्य अभिलक्षण क्या हैं जो आज के विकसित देशों और भारत हेतु सकल घरेलू उत्पाद एवं रोज़गार के अंतर्क्षेत्रीय अंशों के ऐतिहासिक रुझानों से बताए जा सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

5) वर्ष 1951 से 2017 की अवधि में, सकल घरेलू उत्पाद में अंतर्क्षेत्रीय अंश की दृष्टि से भारत में संरचनात्मक परिवर्तन की गति की तुलना आप कैसे करेंगे?

.....

.....

.....

11.4 संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन : भारत बनाम अन्य विकासशील एशियाई देश

भारतीय अर्थव्यवस्था के निष्पादन को एक तुलनात्मक प्राधार में रखने के लिए, हम दक्षिण.पूर्ण एशिया एवं पूर्व एशिया, यथा चीन, इंडोनेशिया, मलेशिया, पाकिस्तान, थाईलैंड एवं कोरिया गणतंत्र की अर्थव्यवस्थाओं पर विचार कर सकते हैं। सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का अंश इन सभी देशों में घटा है और सेवा क्षेत्र का अंश वर्ष 1960–2015 की अवधि में बढ़ा है। इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रुझान निम्नवत् बताए जा सकते हैं–

सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का अंश (कृषि-जीडीपी)

- सकल घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का अंश इन सात देशों में से केवल दो में वर्ष 1960 में 50 प्रतिशत से अधिक रहा, यथा इंडोनेशिया (50 प्रतिशत) और भारत (55 प्रतिशत)। वर्ष 2015 तक 'कृषि-जीडीपी' में उनके अपने-अपने अंश घटकर क्रमशः मात्र 14 और 17 प्रतिशत रह गए।

- वर्ष 1960 में, चीन द्वारा अपने सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का अंश अन्य सभी देशों की तुलना में सर्वाधिक न्यून दर्शाया गया (30 प्रतिशत)। वर्ष 2015 तक, चीन उन तीन देशों में एक हो गया जिनमें सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान घटकर 10 प्रतिशत से भी कम रह गया (8.6 प्रतिशत); अन्य दो देश हैं– मलेशिया (9.1 प्रतिशत) और कोरिया (2.7 प्रतिशत)।

- वर्ष 2002 अर्थात् इस सहस्राब्दि के आरंभ में ही, तीन देश कृषि-जीडीपी के अपने अंश में 10 प्रतिशत से नीचे की गिरावट दर्ज़ करा चुके थे। ये देश हैं– थाईलैंड (9 प्रतिशत), मलेशिया (9 प्रतिशत) और कोरिया (4 प्रतिशत)। फिर भी, वर्ष 2015 में थाईलैंड का कृषि-जीडीपी का अंश बढ़कर 12.4 प्रतिशत हो गया।

- अपना स्तर कायम रखने में मलेशिया उल्लेखनीय है, हालाँकि वर्ष 2015 में कृषि. जीडीपी के उसके अंश में 9.1 प्रतिशत तक किंचित् वृद्धि देखी गई। चीन इस विशिष्ट वर्ग में वर्ष 2022 में 15 प्रतिशत से वर्ष 2015 में 8.6 प्रतिशत पर अपने कृषि-जीडीपी में गिरावट दर्ज कराकर शामिल हुआ। कोरिया ही मात्र एक ऐसा देश है जिसका कृषि-जीडीपी का अंश वर्ष 2015 में गिरकर 5 प्रतिशत से भी नीचे चला गया (2.7 प्रतिशत)।

तालिका 11.1 : कुछ एशियाई देशों में जीडीपी में क्षेत्रीय अंशों (%) में परिवर्तन (1960.2015)

देश	कृषि			उद्योग			सेवाएँ		
	1960	2002	2015	1960	2002	2015	1960	2002	2015
चीन	30	15	8.6	49	51	39.8	21	34	51.6
इंडोनेशिया	50	18	14.3	25	45	46.9	25	38	38.8

थाईलैंड	40	9	12.4	19	43	44.7	41	48	42.9
मलेशिया	36	9	9.1	18	47	41.6	46	44	49.3
कोरिया	37	4	2.7	20	41	39.8	43	55	57.5
पाकिस्तान	46	23	21.8	16	23	23.6	38	54	54.6
भारत	55	24	17.4	16	25	25.8	29	51	56.9

स्रोत : पपोला (2012) एवं डब्ल्यूडीआर डेटाबेस से संकलित।

- ऊपर की बातें इस दृष्टि से निर्दिष्ट की गई हैं कि कृषि-जीडीपी का अंश 10 प्रतिशत से नीचे गिरना एक प्रमुख उपलब्धि है और आगे 5 प्रतिशत से नीचे जाना और भी बड़ी उपलब्धि है।

- विकसित देशों में कृषि-जीडीपी अति निम्न है (यथा, वर्ष 2015 में अमेरिका –1.1 प्रतिशत और उसी वर्ष यूनाइटेड किंगडम –0.6 प्रतिशत)।

सकल घरेलू उत्पाद में औद्योगिक क्षेत्र का अंश (उद्योग-जीडीपी)

- उद्योग-जीडीपी के अंश की ओर रुख़ करें तो चीन ही एकमात्र ऐसा देश है जिसका उद्योग-जीडीपी अंश 1960 में 50 प्रतिशत के नज़दीक रहा (49 प्रतिशत)। वर्ष 1960 में अन्य सभी देशों का उद्योग-जीडीपी अंश 20 प्रतिशत से कम रहा था, जहाँ इंडोनेशिया अपवाद था (25 प्रतिशत)।
- तथापि, चीन का उद्योग-जीडीपी अंश वर्ष 2015 तक 40 प्रतिशत के अंक से नीचे खिसक गया (39.8 प्रतिशत)। यह एक सीधी गिरावट है हालाँकि वर्ष 2002-15 के दौरान उद्योग-जीडीपी में गिरावट मलेशिया और कोरिया में भी देखी गई है।
- वर्ष 1960 में कोरिया अपना उद्योग-जीडीपी अंश 20 प्रतिशत दर्शाता था जो वर्ष 2002 में बढ़कर 41 प्रतिशत हो गया, परंतु उसके बाद से वर्ष 2015 में 39.8 तक किंचित् गिरावट देखी गई।
- उद्योग-जीडीपी अंश तीन देशों के लिए एकसमान रहा, यथा इंडोनेशिया, थाईलैंड और मलेशिया। यह इस अर्थ में है कि वर्ष 1960 में इन तीनों का उद्योग-जीडीपी अंश 20 प्रतिशत की श्रेणी के आस-पास ही रहा (इंडोनेशिया 25 प्रतिशत, थाईलैंड 19 प्रतिशत, मलेशिया 18 प्रतिशत)। वर्ष 2002 तक, कोरिया के साथ ये तीनों देश अपने उद्योग-जीडीपी अंश में 40 प्रतिशत के अंक को पार कर चुके थे (कोरिया 41 प्रतिशत, थाईलैंड 43 प्रतिशत, इंडोनेशिया 45 प्रतिशत और मलेशिया 47 प्रतिशत)। अधिक उल्लेखनीय रूप से, अगले 10+ वर्षों में, यथा वर्ष 2015 तक, इंडोनेशिया और थाईलैंड अपना उद्योग-जीडीपी अंश अंशतः बढ़ा चुके थे (क्रमशः 47 प्रतिशत और 45 प्रतिशत तक), जबकि मलेशिया और कोरिया के लिए इस लिहाज से गिरावट ही दर्ज़ हुई (क्रमशः 41.6 प्रतिशत और 39.8 प्रतिशत तक)।
- अपने उद्योग-जीडीपी की दृष्टि से भारत और पाकिस्तान दोनों बहिर्वर्ती हैं, यथा वर्ष 1960 में दोनों का अंश 16 प्रतिशत रहा और वर्ष 2002 तक दोनों ने न केवल अपना उद्योग-जीडीपी अंश अंशतः ही सुधारा (क्रमशः 25 और 23 प्रतिशत तक) बल्कि वर्ष 2002 से 2015 तक अपने उद्योग-जीडीपी अंश में किंचित् वृद्धि के साथ दोनों ने गतिहीनता भी दर्शाई (क्रमशः 25.8 एवं 23.6 प्रतिशत तक)।

- वर्ष 2002 से 2015 के बीच, भारत और पाकिस्तान में उद्योग-जीडीपी अंश में देखी गई निष्क्रियता परस्पर अंशतः भिन्नता दर्शाते विभिन्न स्तरों पर कोरिया, इंडोनेशिया और थाईलैंड में भी घर कर चुकी थी (तालिका 11.1)। तथापि, संरचनात्मक परिवर्तन या स्थानांतरण कृषि-जीडीपी में एक सदृश गिरावट के साथ उद्योग के विस्तार हेतु देखा गया (यथा, जैसा कि विकसित अर्थव्यवस्थाओं के लिए ऐतिहासिक रुझान से प्रकट हुआ और साथ ही, जैसा कि सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि से सामने आया) जो कि भारत और पाकिस्तान को छोड़कर अन्य सभी देशों के लिए कहीं अधिक स्पष्ट था। उद्योग का विस्तार जैसा कि अन्य पाँच अर्थव्यवस्थाओं में था, इन दो देशों में नहीं देखा गया।

सकल घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र का अंश (सेवा-जीडीपी)

- सेवा-जीडीपी में, वर्ष 1960-2015 की अवधि में, अधिकतम परिवर्तन चीन में देखा गया (30.6 प्रतिशत) जिसके बाद भारत का स्थान था (27.9 प्रतिशत), यथा निकटतम अंक को शून्यांत करने पर क्रमशः 31 प्रतिशत और 28 प्रतिशत।

- मलेशिया यहाँ इस अर्थ में बहिर्वर्ती है कि वह अपने सेवा-जीडीपी में वर्ष 1960 में ही अपने शीर्ष स्तर पर पहुँच चुका था (46 प्रतिशत) और आगामी 55 वर्ष की अवधि में उसका सेवा-जीडीपी इन सभी सात अर्थव्यवस्थाओं के बीच लघुतम अनुपात में ही बढ़ा (यथा, 3.3 प्रतिशत)।

- थाईलैंड और कोरिया अन्य दो ऐसी अर्थव्यवस्थाएँ हैं जिनका सेवा-जीडीपी अंश वर्ष 1960 में 40 प्रतिशत से भी अधिक रहा। कोरिया ने तब से लेकर वर्ष 2015 तक 14.5 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज़ की जबकि थाईलैंड वर्ष 2002 तक अपना सेवा-जीडीपी अंश 7 प्रतिशत तक बढ़ा चुका था परंतु तदंतर वर्ष 2015 में वह 43 प्रतिशत पर ही आ गिरा। इसका अर्थ है कि वर्ष 1960–2015 के दीर्घावधि क्षितिज पर थाईलैंड की सेवा-जीडीपी में वृद्धि न्यूनतम ही रही, यथा मात्र 2 प्रतिशत।

- वर्ष 1960–2002 की अवधि में पाकिस्तान का सेवा-जीडीपी अंश 16 प्रतिशत तक बढ़ा और 54 प्रतिशत के स्तर तक पहुँचा परंतु तदंतर वहाँ गतिहीनता ही नज़र आई– सेवा-जीडीपी में उसका अंश मात्र 0.6 प्रतिशत ही बढ़ा।

- वर्ष 1960–2002 की अवधि में भारत ने अपने सेवा-जीडीपी अंश में उच्चतम वृद्धि दर्ज़ की, यथा 22 प्रतिशत तक। हालाँकि, वर्ष 2002–2015 की अवधि में इस लिहाज से 5.9 प्रतिशत (यथा, 6 प्रतिशत शून्यांश) की अल्प वृद्धि ही देखी गई।

वर्ष 1991–2017 की अवधि में रोज़गार परिवर्तन

- कृषि से श्रमिक बल का स्थानांतरण सभी देशों में सकल घरेलू उत्पाद में परिवर्तन के मुकाबले धीमा ही रहा है। वर्ष 1991–2017 की अवधि में, चीन अपना कृषि-क्षेत्र रोज़गार घटाकर आधा करने में सफल रहा (55 से 27 प्रतिशत) (तालिका 11.2)। इस अवधि में, भारत इसे एक-तिहाई घटा पाया है (63 से 44 प्रतिशत)। जापान ने कृषि में न्यूनतम श्रमिक बल लगाने वाले देश के रूप में उत्कृष्टता हासिल की है (उक्त दोनों ही समय-बिंदुओं पर इकाई का अंक)।

- श्रमिक बल में उद्योग का अंश दर्शाता है कि चार देश– मलेशिया, श्रीलंका,

फिलीपींस एवं पाकिस्तान अपने उद्योगों में रोज़गार समावेशन हेतु एक गतिहीनता की अवधि से गुज़रे हैं। इसके विपरीत, भारत ने औद्योगिक रोज़गार के अंश को 15 प्रतिशत से बढ़ाकर 25 प्रतिशत कर लिया है। इस प्रतिशतता वृद्धि के साथ ही भारत इतना विस्तृत औद्योगिक रोज़गार उत्पन्न करने वाले 10 देशों के बीच द्वितीय स्थान पर है (प्रथम वियतनाम है जहाँ 14 प्रतिशत वृद्धि देखी गई), (यथा, चीन 6 प्रतिशत, इंडोनेशिया 8 प्रतिशत)।

- इस समूह के अन्य देशों से भारत को जो बात अलग करती है वह है– सेवा क्षेत्र द्वारा रोज़गार समावेशन में अंतर। अन्य सभी देशों में, सेवा क्षेत्र का अंश सकल घरेलू उत्पाद के अंश की संगति में ही न्यूनाधिक बढ़ा है। तथापि, भारत में, रोज़गार अंश ने सेवा क्षेत्र के जीडीपी अंश में परिवर्तन की अपेक्षा काफ़ी कम वृद्धि दर्शाई है। इसका अर्थ है कि जबकि सकल घरेलू उत्पाद में अपने योगदान की दृष्टि से सेवा क्षेत्र ही प्रमुख आर्थिक क्षेत्र है, रोज़गार के लिए यह एक तुच्छ सहायक ही है।

- सेवा क्षेत्र में, बिना किसी अपवाद के सभी 10 देश अपना रोज़गर अंश बढ़ा चुके हैं। तथापि, वे जो इस अवधि (1991-2017) में 15 प्रतिशत से कहीं अधिक वृद्धि हासिल करने में सफल रहे हैं, इस प्रकार हैं– चीन (23 प्रतिशत), थाईलैंड (18 प्रतिशत), वियतनाम (17 प्रतिशत) और मलेशिया (15 प्रतिशत)।

तालिका 11.2% प्रमुख क्षेत्रों के अनुसार रोज़गार अंश (कुल रोज़गार की प्रतिशतता)

प्रमुख एशियाई अर्थव्यवस्थाएँ	कृषि		उद्योग		सेवाएँ	
	1991	2017	1991	2017	1991	2017
चीन	55	27	19	24	26	49
भारत	63	44	15	25	22	31
इंडोनेशिया	53	31	14	22	33	46
जापान	7	4	35	27	58	70
मलेशिया	26	12	27	27	46	61
पाकिस्तान	48	42	20	20	33	38
फिलीपिंस	43	28	15	16	42	50
श्रीलंका	42	27	26	26	32	47
थाईलैंड	60	34	15	23	25	43
वियतनाम	73	42	9	23	18	35

स्रोत : अंतर्राष्ट्रीय श्रम संस्थान [http://www.ilo.org/global/statistics-and-databases]

बोध प्रश्न 2 (दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।)

1) कौन-से दो देश हैं जिनका कृषि-जीडीपी अंश वर्ष 1960 में 50 प्रतिशत से अधिक रहा? इस संबंध में उनके वर्तमान स्तर (2015 में) क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) कृषि-जीडीपी में वर्ष 1960 में अन्य सभी से न्यूनतम अंश किसका रहा? इसका अंश वर्ष 2015 में क्या रहा? वे दो अन्य देश कौन-से हैं जिन्होंने यह स्तर वर्ष 2015 में प्राप्त कर लिया?

.....

.....

.....

.....

.....

3) सभी सात एशियाई देशों के बीच कोरिया किस दृष्टि से अनुपम रहा है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) उद्योग-जीडीपी की दृष्टि से चीन के विषय में क्या उल्लेखनीय है?

.....

.....

.....

.....

.....

5) अपने उद्योग-जीडीपी के लिहाज से भारत और पाकिस्तान क्यों बहिर्वर्ती हैं?

.....

.....

.....

.....

6) वर्ष 1960–2015 की अवधि में वे दो देश कौन.से रहे जिन्होंने सेवा-जीडीपी में उच्चतम परिवर्तन दर्ज कराया?

.....

.....

.....

.....

.....

7) अपने सेवा-जीडीपी के लिहाज से थाईलैंड किस प्रकार अद्वितीय रहा है?

.....

.....

.....

.....

.....

8) अन्य अर्थव्यवस्थाओं की तुलना में भारतीय सेवा क्षेत्र के विषय में क्या उल्लेखनीय है?

.....

.....

.....

.....

.....

11.5 संरचनात्मक परिवर्तनों का तुलनात्मक वर्णन : भारत बनाम विकसित एवं ब्रिक्स अर्थव्यवस्थाएँ

अर्थव्यवस्थाओं में संरचनात्मक परिवर्तन परोक्ष रूप से समग्र आर्थिक स्तर पर अनुभूत संवृद्धि दरों से आकलित किए जाते हैं। लब्ध वृद्धि दरें और परिणामी संरचनात्मक परिवर्तन समग्र नीति एवं संस्थानिक अंतर्दृष्टियों का प्रतिबिंब होते हैं। इस दृष्टिकोण से, हालाँकि प्रत्यक्ष रूप से नहीं, समस्त आर्थिक संवृद्धि दरों के तुलनात्मक वर्णन पर दृष्टिपात करना उपयोगी रहेगा। विकसित एवं विकासशील अथवा उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाओं वाले मिले-जुले देशों के इस परिदृश्य का तुलनात्मक वर्णन तालिका 11.3 में प्रस्तुत किया गया है। उसमें दिए गए आँकड़ों से सामने आने वाले प्रमुख अभिलक्षण निम्नवत् हैं–

तालिका 11.3 : विकसित एवं ब्रिक्स अर्थव्यवस्थाओं हेतु तुलनात्मक संवृद्धि वर्णन (%) : 2010 से 2016

वर्ष	विश्व	यूएसए	यूरो. ज़ोन	ज़र्मनी	जापान	ब्राज़ील	रूस	भारत	चीन	दक्षिण अफ्रीका
2010	5.2	3.0	1.8	3.6	4.4	7.5	4.5	9.9	10.4	5.4
2011	3.8	1.8	1.5	3.0	–0.9	3.9	4.3	7.4	9.2	4.4

2012	2.4	2.2	−0.9	0.5	1.5	1.9	3.5	5.6	7.8	3.8
2013	2.6	1.7	−0.3	0.5	2.0	3.0	1.3	6.4	7.8	4.8
2014	2.8	2.3	1.2	1.6	0.4	0.5	0.7	7.5	7.3	4.6
2015	2.7	2.6	1.5	1.7	1.2	−3.8	−2.8	8.0	6.9	3.3
2016	2.4	1.6	1.8	1.9	0.9	−3.6	−0.2	7.1	6.7	1.2

स्रोत : विश्व बैंक डेटाबेस

- विश्व आर्थिक संवृद्धि दर वर्ष 2010 से 2016 की अल्पावधि में आधी हो चुकी है अर्थात् वर्ष 2010 में 5.2 प्रतिशत से वर्ष 2016 में (2.4 तालिका 11.3)। विशेष रूप से, अमेरिकी अर्थव्यवस्था की संवृद्धि दर भी वर्ष 2010 में 3 प्रतिशत से खिसककर वर्ष 2016 में 1.6 प्रतिशत पर आ गई। इसी प्रकार का ह्रासोन्मुख वृद्धि प्रवाह जर्मनी (वर्ष 2010 में 3.6 प्रतिशत से वर्ष 2016 में 1.9 प्रतिशत), जापान (वर्ष 2010 में 4.4 प्रतिशत से वर्ष 2016 में 0.9) तथा दक्षिण अफ्रीका (वर्ष 2010 में 5.4 प्रतिशत से वर्ष 2016 में 1.2 प्रतिशत) में देखा गया।

- यूरो-ज़ोन, जापान, ब्राज़ील और रूस ने वर्ष 2010–2016 की अवधि में किसी न किसी वर्ष ऋणात्मक वृद्धि दरों का अनुभव किया। विशेषकर, ब्राज़ील की अर्थव्यवस्था में वर्ष 2010 में 7.5 प्रतिशत की ऊँचाई से वर्ष 2016 में −3.6 प्रतिशत की गहराई तक तथा रूस की अर्थव्यवस्था में वर्ष 2010 में 4.5 प्रतिशत वृद्धि से वर्ष 2016 में −0.2 प्रतिशत गिरावट तक अवपात देखा गया।

- भारत और चीन दो ऐसे देश हैं जो इस संबंध में अनूठे हैं। इन दोनों ही देशों ने, वैश्विक प्रवाह के साथ संगति में, अपनी अर्थव्यवस्था में अवपाती संवृद्धि निष्पादन का अनुभव किया, और वर्ष 2010 में एक उच्च संवृद्धि दर से ये वर्ष 2016 में एक निम्न वृद्धि दर पर आ गिरे। जहाँ चीन की संवृद्धि दर वर्ष 2010 में 10.4 प्रतिशत से लुढ़ककर वर्ष 2016 में 6.7 प्रतिशत पर आ गई, वहीं भारत की संवृद्धि दर वर्ष 2010 में 9.9 प्रतिशत से खिसककर वर्ष 2016 में 7.1 प्रतिशत पर आ गई।

अनेक अधोमुखी आशंकाएं आज भी क्षितिज पर दृष्टिगोचर होती हैं। इनमें शामिल हैं– (i) विश्व अर्थव्यवस्था की सतत् मंदता; (ii) संभव पूँजी बहिर्वाह जो कि अमेरिका में ब्याज़ दर में हालिया वृद्धि के कारण हुआ है; (iii) वैश्विक तेल कीमतों में एक संभव वैपरीत्य; (iv) अपर्याप्त मानसूनी वर्षा; तथा (v) वित्त बाज़ार की दुर्बलताएँ। जैसा कि ऊपर देखा गया, कुछ अर्थव्यवस्थाओं में मंदन के अलावा, अनेक अर्थव्यवस्थाओं में चिंता की एक बढ़ती प्रवृत्ति रही है – वर्धमान ऋण-जीडीपी (DTG) अनुपात। उदाहरण के लिए, चीन ने 250 प्रतिशत का एक उच्च DTG अनुपात हासिल किया। इसी प्रकार, दो साख-निर्धारण अभिकरणों (rating agencies) के अनुसार, ब्राज़ील का DTG एक कबाड़ स्थिति पर जा गिरा है।

11.6 सार-संक्षेप

विकास प्रस्थिति के दौरान संरचनात्मक परिवर्तन सिद्धांततः कृषि से उद्योग और फिर उद्योग से सेवा क्षेत्रों की ओर परिणत होने की ही अपेक्षा की जाती है। इस प्रकार का परिवर्तन बढ़ती आमदनी और बेहतर जीवन-दशाओं का दर्पण होता है। अनेक विकसित अर्थव्यवस्थाओं ने अपने विकास के दौरान इस प्रकार के संक्रमण का अनुभव

किया है। तथापि, भारत जैसी कुछ उदीप्यमान अर्थव्यवस्थाएँ सकल घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र के एक उच्चतर अंश पर पहुँच गई हैं, जहाँ उनका उद्योग– जीडीपी अंश 25 से 30 प्रतिशत के निम्न स्तर पर ही रहा है। यह चीन, इंडोनेशिया, थाईलैंड, मलेशिया और कोरिया जैसी कुछ अन्य अर्थव्यवस्थाओं से भिन्न है, जहाँ सभी 40 से 50 प्रतिशत का एक दृढ़तर औद्योगिक आधार रखते हैं। औद्योगिक क्षेत्र के विस्तार की इस प्रकार की प्लुति अर्थात् सकल घरेलू उत्पाद में सीधे सेवा क्षेत्र प्रभावी अंश पर पहुँचने हेतु एक कारण रहा है– 'अंतर्राष्ट्रीय व्यापार' का प्रभाव। इसमें संचार प्रौद्योगिकियों में विकास एवं देश-विदेश में लोगों के आवागमन से भी मदद मिलती है। अनेक उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में समग्र आर्थिक संवृद्धि दरों में ह्रासोन्मुखी प्रवाह का अनुभव किया गया; जैसे अमेरिका, जर्मनी और दक्षिण अफ्रीका, जिन्होंने वर्ष 2010 में अपनी उपलब्धियों के मुकाबले वर्ष 2016 जैसे अधिक हाल के वर्षों में अपनी संवृद्धि दरें आधी ही दर्ज कराई हैं। भारत और चीन दो ऐसे देश हैं जो उक्त ह्रासोन्मुखी प्रवाह में अपवाद स्वरूप खड़े हैं। भारत जैसे देशों में सेवा क्षेत्र के प्रभुत्व का एक और भी उल्लेखनीय अभिलक्षण है– उसका अपेक्षाकृत निम्न रोज़गार समावेशन सामर्थ्य।

11.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) Kuznets, S (1966). *Modern Economic Growth: Rates, Structure and Spread*, Oxford and IBH Publishing Co.

2) Kuznets, S. (1971). *Economic Growth of Nations: Total Output and Production Structure*, Cambridge: Harvard University Press.

3) Papola, T. S. (2008). Emerging Pattern of Indian Economy, *The Indian Economic Journal*. Vol.54, No.1, April –June.

4) Papola, T. S. (2005). 'Structural Changes in the Indian Economy: Some Implications of the Emerging Pattern', *Artha Beekshan*, Vol. 13, No. 4,

5) Rakshit, Mihir (2007). Services Led Growth: The Indian Experience, Artha Beekshan , Vol.15, No. 4.

11.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) ऐसा इस कारण है कि सेवाओं में प्राथमिक एवं औद्योगिक क्षेत्रों की वस्तुओं की अपेक्षा कहीं अधिक माँग की आय में लोच नज़र आती है।

2) यह पदबंध इस अर्थ में लिया जाता है कि औद्योगिक विकास के एक निश्चित चरण के पश्चात् रोज़गार के अंश में वृद्धि औद्योगिक क्षेत्र के रोज़गार अंश की लागत पर भी ही होगी; [उद्योग के अंश में गिरावट की तुलना सेवा क्षेत्र के रोज़गार अंश में सदृश वृद्धि से की जाती है।

3) सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का अंश वर्ष 1951 में 60 प्रतिशत की ऊँचाई से औंधे मुँह गिरकर वर्ष 2010 में मात्र 17 प्रतिशत रह गया। तथापि, जबकि सकल घरेलू उत्पाद में उद्योग की आय का अंश वर्ष 1960 से 2002 तक 16 प्रतिशत से 25 प्रतिशत तक बढ़ा, परंतु उसके बाद निष्क्रिय प्राय हो गया (वर्ष 2015 तक मात्र 25.8 तक पहुँच कर)। सेवा क्षेत्र के लिए वृद्धि महत्त्वपूर्ण रही– वर्ष 1960 में 21 प्रतिशत से वर्ष 2015 में 57 प्रतिशत तक।

4) ये हैं– (i) जीडीपी में, विकसित देशों में कृषि से (65 से 72 प्रतिशत के बीच) प्रमुख योगदान रहा, जिसके बाद आते हैं– उद्योग (12 से 15 प्रतिशत) और सेवाएँ (16 से 20 प्रतिशत)। अन्य सामान्य अभिलक्षणों के लिए भाग 11.3 देखें और उत्तर दें।

5) परिवर्तन की गति वर्ष 1991 से द्रुत हुई है। कृषि अंश वर्ष 1991 तक 60 प्रतिशत से घटकर 35 प्रतिशत पर आ चुका था (यथा, 25 प्रतिशत की गिरावट), परंतु वर्ष 2017 तक यह और गिरकर मात्र 17 प्रतिशत रह गया (यथा, वर्ष 1991 से 18 प्रतिशत और गिरकर)। उद्योग का अंश जो वर्ष 2002 से 2015 की अवधि में 25 प्रतिशत से 25.8 प्रतिशत तक मात्र 0.8 प्रतिशत ही बढ़ा था, वर्ष 2017 में 29 प्रतिशत पहुँचकर अपने अंश में अचानक सुधार दर्शाने लगा। वर्ष 1951–2017 की अवधि में सेवा क्षेत्र का अंश 28 प्रतिशत से बढ़कर 54 प्रतिशत हुआ है।

बोध प्रश्न 2

1) इंडोनेशिया और भारत। क्रमशः 14 प्रतिशत और 17 प्रतिशत।

2) चीन (30 प्रतिशत); 2015 में 9 प्रतिशत। कोरिया और मलेशिया अन्य दो देश हैं (क्रमशः 3 व 9 प्रतिशत)। वस्तुतः, मलेशिया और कोरिया 10 प्रतिशत अंश से भी कम का यह स्तर वर्ष 2002 में ही हासिल कर चुके थे। परंतु अपने कृषि. जीडीपी में 2015 में मलेशिया का अंश 12 प्रतिशत तक बढ़ गया।

3) कोरिया का उदाहरण अद्वितीय है जिसने साहित्य द्वारा इंगित सैद्धांतिक अंतर्दृष्टियों का नितांत अक्षरशः पालन किया। न केवल उसका कृषि-जीडीपी निम्नतम और 5 प्रतिशत के स्तर से नीचे है, जो वह वर्ष 2001 में हासिल कर चुका था, उसका उद्योग-जीडीपी वर्ष 1960 में 20 प्रतिशत से दोगुना होकर वर्ष 2002 में 41 प्रतिशत हो गया। एक ऐसा स्तर है जो उसने 2015 तक कायम रखा है। इसके अलावा, उसका वर्धमान सेवा-जीडीपी सुसंगत रहा है (यथा, बिना किसी ह्रास अथवा निष्क्रियता के, जैसा कि अन्य देशों के मामले में देखा गया)।

4) प्रथम, यही एकमात्र ऐसा देश है जो वर्ष 1960 में भी उच्चतम और 50 प्रतिशत के लगभग (49 प्रतिशत) अंश दर्शाता था। दूसरे, जबकि सभी देशों में उद्योग. जीडीपी में वृद्धि दिखाई दी है, चीन एकमात्र ऐसा देश है जहाँ सीधी गिरावट देखी गई है (वर्ष 2002.15 के बीच 51 से 40 प्रतिशत)।

5) यही निम्नतम उद्योग-जीडीपी वाले दो देश हैं। दूसरे, वर्ष 2002–15 की अवधि मे इस लिहाज से निष्क्रियता प्रायः देखी गई है।

6) चीन और भारत (क्रमशः 31 और 28 प्रतिशत)।

7) वर्ष 1960 में ही यह उच्चतम सेवा-जीडीपी दर्शाता था (यथा, 40 प्रतिशत से भी अधिक)। वर्ष 1960.2015 की दीर्घ समयावधि में इसका सेवा-जीडीपी मात्र 2 प्रतिशत तक ही बढ़ा।

8) सेवा-जीडीपी का बदलाव कहीं अधिक है। रोज़गार में अनुरूप बदलाव अपेक्षाकृत कम है।

इकाई 12 भारत का सामाजिक एवं आर्थिक विकास : तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य*

संरचना

12.0 उद्देश्य

12.1 विषय प्रवेश

12.2 अंतर्राष्ट्रीय तुलना हेतु प्राधार

12.3 आर्थिक आयाम

12.3.1 प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद

12.3.2 संरचनात्मक आयाम

12.4 विकास में अभाव

12.4.1 निर्धनता

12.4.2 बेरोज़गारी

12.4.3 असमानता

12.5 विकास के सामाजिक आयाम

12.5.1 शैक्षिक स्थिति

12.5.2 स्वास्थ्य स्थिति

12.6 विकास के संश्लिष्ट सूचकांक

12.6.1 मानव विकास सूचकांक

12.6.2 सामाजिक प्रगति सूचकांक

12.6.3 विश्व सुख-सम्पन्नता सूचकांक

12.7 सारांश

12.8 सार-संक्षेप

12.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.10 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

12.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि:

- अंतर्राष्ट्रीय तुलनात्मक वर्णन हेतु एक आधार स्वरूप 'प्रति व्यक्ति आय' का प्रयोग करने की सीमाएँ समझ सकें;
- अपने सामाजिक एवं आर्थिक विकास हेतु देशों की कोई तुलनात्मक रूपरेखा तैयार करने के लिए कोई प्राधार निर्दिष्ट कर सकें;
- वर्ष 1961–2018 के एक लंबे समय-प्राधार में अन्य देशों के साथ भारत के संवृद्धि वर्णन के 'आर्थिक आयाम' की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकें;

* प्रो. डी.एन. रेड्डी, उस्मानिया विश्वविद्यालय

- वर्ष 1961-2018 की अवधि में श्रीलंका और चीन की आर्थिक संवृद्धि के साथ भारत की आर्थिक संवृद्धि की तुलना में मुख्य अंतर उजागर कर सकें;
- अन्य अर्थव्यवस्थाओं के साथ एक तुलनात्मक वर्णन में भारत में 'विकास की कमियों' का लेखा-जोखा प्रस्तुत कर सकें;
- अन्य अर्थव्यवस्थाओं के साथ भारत में सामाजिक-क्षेत्र विकास की तुलना कर सकें; तथा
- 'विकास के विशद् सूचकांकों' पर टिप्पणी लिख सकें।

12.1 विषय प्रवेश

द्वितीय विश्व युद्ध के अंत और भारत समेत, अंधिकांश नव-स्वतंत्र देशों में उपनिवेशवाद की क्रमिक समाप्ति से ही 'विकास' को लोगों के लिए बेहतर जीवन-यापन दशाएँ उत्पन्न करने की दिशा में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। विकास को आरंभतः सकल घरेलू उत्पाद और प्रति व्यक्ति जीडीपी के उच्चतर स्तर हासिल करने के रूप में समझा जाता था। इसके लिए, विकास हासिल करने के लक्ष्य राष्ट्रीय आय में वृद्धि दरों के पदों में तय किए जाते थे। देशों के विकास-स्तर प्रति व्यक्ति आय-स्तर के पदों में मापे जाते थे। प्रति व्यक्ति आय में विकास मापने से इन बातों में मदद मिली– (i) देशों को विकसित और विकासशील के रूप में अलग-अलग मानना, तथा (ii) अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष एवं विश्व बैंक जैसी बहुपक्षीय संस्थाओं द्वारा विकासशील देशों के लिए आवश्यक वित्तीय मदद को समर्थन दिया जाना।

जबकि देशों के विकास का मापन प्रति व्यक्ति आय के पदों में किया जाना जारी है, लोगों के जीवन यापन की दशा दर्शाने के लिए केवल प्रति व्यक्ति आय के स्तर पर ही विचार किये जाने की उपयुक्तता पर सवाल उठाए गए हैं। यहाँ यह तर्क सही ही लगता है कि प्रति व्यक्ति आय एक औसत मात्र ही होती है और वह आय का वितरण नहीं दर्शाती। यह आलोचना उन देशों के मामलों में सुस्पष्ट दिखाई देती है जो उच्च प्रति व्यक्ति आय का लाभ तो पाते हैं परंतु क्षमताओं एवं स्वतंत्रता के लिहाज से विकास की मूलभूत उपलब्धियों का अभाव भी दर्शाते हैं। अतः, प्रति व्यक्ति आय बेहतर जीवन यापन के लिए एक साधन मात्र तो है मगर विकास के लिए पर्याप्त नहीं। विकास के लिए, इसे जनसंख्या विस्तार एवं लिंग-समानता स्तर के साथ रखकर ही देखा जाना चाहिए। इस तर्क ने एक बहुआयामी दृष्टिकोण से विकास की अवधारणा को ही पलट दिया है। दूसरे शब्दों में, विकास मापदंड में सामाजिक-आर्थिक महत्त्व के अनेक आयामों पर विचार किया जाना चाहिए। संश्लिष्ट रूप से परिभाषित एवं संरचित इन मापदण्डों को ही फिर अंतर्देशीय तुलनाएँ करने के लिए आधार-स्वरूप लिया जाना चाहिए। इस इकाई के अगले ही भाग में, हम सामाजिक एवं आर्थिक विकास के स्तरों का मूल्यांकन करने के लिए अनेक देशों की तुलना हेतु एक व्यापक प्राधार पर चर्चा करेंगे। इस प्राधार के आधार पर ही आगे के भाग अन्य चुनिंदा अर्थव्यवस्थाओं के विकास का भारत के विकास से तुलनात्मक वर्णन प्रस्तुत करेंगे। अगले भाग में, उस आधार की रूपरेखा भी प्रस्तुत है जिस पर इन अर्थव्यवस्थाओं का प्रतिदर्श चुना जाता है।

12.2 अंतर्राष्ट्रीय तुलना हेतु प्राधार

वे कारक, जिन पर विचार किए जाने की आवश्यकता है, इस प्रकार है – (i) आधारभूत आर्थिक आयाम, यथा जनसंख्या सकल घरेलू उत्पाद, प्रति व्यक्ति आय, जीडीपी में संवृद्धि, कुल रोज़गार एवं जीडीपी में कृषि का अंशदान, (ii) निर्धनता, भूख, असमानता एवं बेरोज़गारी के स्तरों की दृष्टि से आर्थिक विकास की कमियाँ; (iii) शिक्षा, स्वास्थ्य एवं लिंग विकास स्थिति जैसे विकास संबंधी सामाजिक आयामों में प्रगति; तथा उपर्युक्त तीनों के आधार पर (iv) मानव विकास जैसे सामाजिक प्रगति का कोई एक अथवा अनेक विशद सूचकांक। इनमें से प्रत्येक में, भारत की स्थिति का अन्य चुनिंदा अर्थव्यवस्थाओं की स्थिति के साथ एक तुलनात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करने हेतु, आगामी भागों में, हम इसी क्रम में, चर्चा आगे बढ़ाएँगे। तुलनार्थ देशों को चुनने के लिए, हम एशिया, अफ्रीका, उत्तरी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका और यूरोप तक सीमित पाँच महाद्वीपों में से प्रत्येक से एक देश लेते हैं। विशेष रूप से, हम विकासशील और विकसित देशों में भेद के पचड़े में न पड़ते हुए, निम्नलिखित देशों को शामिल करते हैं– भारत, बांगलादेश, नेपाल, पाकिस्तान और श्रीलंका (दक्षिण एशिया से); पूर्व एशिया से चीन; लैटिन अमेरिका से ब्राज़ील; दक्षिण अफ्रीका (अफ्रीका से); संयुक्त राज्य अमेरिका (उत्तरी अमेरिका से) तथा यूनाइटेड किंग्डम (यूरोप से)। हम यहाँ अपना तुलनात्मक वर्णन इन 10 देशों तक ही सीमित रखेंगे। ये 10 देश मिलकर विश्व जनसंख्या के आधे से अधिक (51 प्रतिशत) का लेखा-जोखा करते हैं। विशेषकर, चीन और भारत में ही मिलकर विश्व जनसंख्या का एक-तिहाई (36.6 प्रतिशत) अंश बसा है। अतः, इन दो देशों में जितना भी विकास होता हो वह वैश्विक मानव प्रगति पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डालता है।

अपने भेदपूर्ण ऋणदान उद्देश्यों से विश्व बैंक उक्त देशों को चार श्रेणियों में रखता है, यथा – (i) प्रति व्यक्ति $1025 (2018) से कम आय वाले निम्न आय देश, (ii) प्रति व्यक्ति $1026 – $3995 आय वाले निम्न मध्यम-आय देश, (iii) प्रति व्यक्ति $3996– $12375 आय वाले उच्च मध्यम आय देश, तथा (iv) प्रति व्यक्ति $12376 या उससे अधिक आय वाले उच्च आय। इस वर्गीकरण के अनुसार, हमारे प्रतिदर्श में लिए गए 10 देशों में से 4 दक्षिण-एशियाई देश, श्रीलंका को छोड़कर (जो कि एक उच्च मध्यम-आय देशकी पात्रता रखता है), निम्न मध्यम-आय समूह में ही आते हैं। श्रीलंका के साथ-साथ चीन, दक्षिण अफ्रीका और ब्राज़ील भी उच्च मध्यम-आय समूह में रखे गए हैं। अमेरिका और इंग्लैंड सदा उच्च-आय समूह में ही रहे हैं। आप देखेंगे कि, कालांतर में, इन चार समूहों के भीतर देशों की स्थिति बदलती रहती है और इस कारण हमें 'विकास सूचक' विषयक विश्व बैंक के प्रकाशित आँकड़ों से स्वयं को अद्यतन रखना पड़ता है। उदाहरण के लिए, श्रीलंका उच्च मध्यम-आय समूह में एक नव-प्रवेशक है जबकि नेपाल हाल ही में निम्न-आय से खिसककर निम्न मध्यम-आय समूह में चला गया है।

12.3 आर्थिक आयाम

वर्ष 1961–2011 की एक लंबी अवधि में, चीन को छोड़कर, शेष सभी एशियाई देश अपेक्षाकृत निम्न वृद्धि दर परिदृश्य में दुःख के दिन काटते नज़र आते हैं (जिन्हें जीडीपी में 4 प्रतिशत औसत वार्षिक संवृद्धि से नीचे दर्शाया जाता है) तालिका 12.1)।

इनकी संवृद्धि दरें नेपाल के 1.4 प्रतिशत की निचाई से श्रीलंका कर 3.3 प्रतिशत की ऊँचाई तक दिखाई पड़ती है।

तालिका 12.1 : विकास का आर्थिक आयाम

देश	जनसंख्या 2018 (दस लाख)	प्रतिव्यक्ति जीडीपी 2018 (वर्तमान US $)	जीडीपी की औसत वार्षिक वृद्धि दर % 1961-2011	वृद्धि दर 2018	जीडीपी में कृषि का अंशदान (%) 2018	कुल रोज़गार में कृषि का अंशदान 2018 (%)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)
भारत	1352	2010	3.1	6.8	14.6	43
बांगलादेश	161	1698	1.37	7.9	13.1	40
नेपाल	28	1033	1.4	6.7	25.3	70
पाकिस्तान	212	1482	2.6	5.8	22.9	41
श्रीलंका	21	4102	3.3	3.2	7.9	26
चीन	1392	9770	6.8	6.6	7.2	27
दक्षिण अफ्रीका	57	6374	—	0.8	2.2	5
ब्राज़ील	209	8920	—	1.1	4.4	9
अमेरिका	327	62795	—	2.9	0.9	1
इंग्लैंड	66	42944	—	1.4	0.6	1

स्रोत : 1) स्तंभ 4 (1961-2011 की वृद्धि दर) को छोड़कर, विश्व बैंक विकास संसूचक।
2) स्तंभ 4 के लिए : द्रीस व सेन (2013)।

चीन एक अपवाद ही रहा, जहाँ 50 वर्ष की एक लंबी अवधि में 6.8 प्रतिशत की उच्चतम औसत वृद्धि दर दिखाई दी। परंतु हाल के वर्षों में, वर्ष 2018 में, श्रीलंका को छोड़कर, ये सभी देश उच्च-वृद्धि पथ पर पहुँच गए हैं (जिसे '5 प्रतिशत से ऊपर' के रूप में परिभाषित किया जाता है)। विशिष्ट रूप से, विकसित देशों को 0-2 प्रतिशत की शृंखला में अपनी निम्न वृद्धि दर के लिए उल्लेखनीय जाना जाता है। ऐसा इसलिए है कि विकसित देशों के पास बेहतर संस्थापित (यथा, औपचारिक) प्राधारिक आधार होता है। इससे एक ऐसी संतुलन प्राय स्थिति में रहकर उत्पादन एवं वितरण संबंधी अनेक कारकों को संबल मिलता है जहाँ इससे आगे वर्धमान पूँजी-उत्पादन अनुपात (ICOR) विकासशील देशों में इस अनुपात (ICOR) से अपेक्षाकृत कम ही रहेगा। इसके अलावा, विकसित देशों के पास अपनी जनसंख्या एवं श्रमशक्ति की अपेक्षा वृहत्तर जीडीपी मान होते हैं। ये सभी कारक विकासशील देशों के उदाहरण में उल्टे ही पाए जाते हैं, जहाँ प्रौद्योगिकीय अनुप्रेरण उच्चतर वर्धमान पूँजी-उत्पादन अनुपात (ICOR) लाभ देने वाला होता है।

12.3.1 प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद

प्रति व्यक्ति सकल घरेलू उत्पाद (GDP) के पदों में, चार दक्षिण-एशियाई देशों के बीच, भारत की स्थिति द्वितीय (वर्ष 2018 में $2010) है। श्रीलंका की प्रति व्यक्ति जीडीपी भारत की प्रति व्यक्ति जीडीपी ($4102) से लगभग दोगुनी है। परंतु चीन की प्रति व्यक्ति जीडीपी उच्चतम में शामिल है – यह श्रीलंका की प्रति व्यक्ति जीडीपी के दोगुने से भी अधिक ($9770) है। हमारे प्रतिदर्श में दो उच्च-आय देशों की प्रति व्यक्ति जीडीपी चीन से भी कई गुना अधिक है (इंग्लैंड की 4 गुना अधिक और अमेरिका की 6 गुना अधिक)। दक्षिण अफ्रीका और ब्राज़ील के ये आँकड़े (PCI) चीन से तो कम मगर श्रीलंका से उच्च मान दर्शाते हैं (क्रमशः $6374 व $8920)।

12.3.2 संरचनात्मक आयाम

आय के उच्चतर स्तरों की ओर आरोहण में प्रमुख रूप से कृषिक अवस्था (जिसे कृषि में लगे 40 प्रतिशत से भी अधिक कार्यबल के रूप में परिभाषित किया जाता है, से प्रमुख रूप से विनिर्माणन् एवं सेवा क्षेत्र की अवस्था में विवर्तन शामिल होता है। इस मानदण्ड से, चार देशों, यथा– भारत, बांगलादेश, नेपाल और पाकिस्तार में कृषि में लगा कार्यबल 40 से 70 प्रतिशत के बीच है (बांगलादेश 40 प्रतिशत और नेपाल 70 प्रतिशत)। आय और रोज़गार के लिए कृषि पर अपेक्षाकृत अधिक निर्भरता विकास का निम्न स्तर दर्शाती है। ऐसा इसलिए है कि कृषि पर कार्यबल के वृहत्तर भाग की निर्भरता (अपनी आय/जीडीपी में निम्न अंशदान के साथ) के कारण प्रति व्यक्ति उत्पादकता (जिसे आय एवं कार्यबल के अनुपात के रूप में परिभाषित किया जाता है) समस्त अर्थव्यवस्था की प्रति व्यक्ति आय (PCI) को निम्न रखती है। उक्त चारों देश अपना सकल घरेलू उत्पाद कृषि के उच्च अंशदान के साथ दर्शाते हैं (यथा 10-25 प्रतिशत की श्रृंखला में बांगलादेश में 13 प्रतिशत से लेकर नेपाल में 25 प्रतिशत तक)। कृषि से उद्योग की ओर प्राधारिक विवर्तन के साथ, विकसित देश न सिर्फ कृषि में अपने कार्यबल का निम्नतम अंश दर्शाने लगते हैं बल्कि उनकी जीडीपी में भी इस क्षेत्र का योगदान निम्नतम होता जाता है। इस लिहाज से अमेरिका और इंग्लैंड दोनों ही उल्लेखनीय हैं, जहाँ कृषि पर निर्भर उनका कार्यबल मात्र 1 प्रतिशत है और जीडीपी में अंशदान 1 प्रतिशत से भी कम है।

अंततोगत्वा, वर्ष 1961-2018 की लंबी अवधि में श्रीलंका और चीन (वे दो पड़ोसी जिन्होंने प्रभावशाली ढंग से प्रगति की है – एक के भारत जितनी ही बड़ी जनसंख्या के साथ और दूसरे ने अपनी छोटी-सी जनसंख्या के साथ, वर्ष 2018 में केवल 2.1 करोड़) के साथ भारत के आर्थिक-वृद्धि विवरण में निम्नलिखित तीन प्रमुख अंतर उजागर करना अभीष्ट होगा–

- भारत और श्रीलंका दोनों ने 3 प्रतिशत औसत वार्षिक से किंचित् ऊपर लगभग बराबर जीडीपी संवृद्धि हासिल की है परंतु जनसंख्या आयाम में वृहद् अंतर के कारण, श्रीलंका की प्रति व्यक्ति जीडीपी भारत की प्रति व्यक्ति जीडीपी से दोगुनी है।

- लगभग 60 वर्ष की समयावधि में, हालाँकि चीन की संवृद्धि दर भारत की संवृद्धि दर से दोगुनी रही है। वर्ष 2018 में, दोनों देशों की संवृद्धि दर लगभग बराबर रही। भारत की 6.8 प्रतिशत और चीन की 6.6 प्रतिशत)। इससे यह तथ्य

उजागर होता है कि हाल के वर्षों में बेशक चीन की आर्थिक संवृद्धि में बड़ा उछाल आया, भारत भी उसके बराबर जा खड़ा हुआ है।

- चीन और श्रीलंका में कृषि का रोज़गार का अंश तुलनात्मक रूप से कम भी रहा और लगभग बराबर भी (वर्ष 2018 में क्रमशः 27 व 26 प्रतिशत)। कृषिगत रोज़गार में भारत में तुलनात्मक अंश आज भी काफ़ी ऊँचा है (वर्ष 2018 में 43 प्रतिशत)।

बोध प्रश्न 1 दिये गये स्थान मे अपना उत्तर लगभग 50.100 षब्दों में लिखें।

1) प्रतिव्यक्ति आय (PCI) को सीमाकारी क्यों माना जाता है, विशेषकर अंतर्राष्ट्रीय तुलना की दृष्टि से? फिर भी, इसे आज भी अंतर्राष्ट्रीय तुलना में कैसे प्रयोग किया जाता है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत के साथ अन्य अर्थव्यवस्थाओं का तुलनात्मक वर्णन प्रस्तुत करने के लिए एक विश्लेषणात्मक प्राधार निर्दिष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

3) विकास के 'आर्थिक आयाम' के विश्लेषणार्थ कौन-से चरों पर विचार किया जाता है? अन्य देशों के साथ किसी तुलनात्मक वर्णन में इस लिहाज से भारत कहाँ खड़ा है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) किस दृष्टि से भारत, श्रीलंका और चीन के बीच अंतर स्पष्ट दिखाई पड़ता है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5) अपनी विकास उपलब्धि के लिए बांग्लादेश और नेपाल क्यों उल्लेखनीय हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

6) 'विकास के प्राधारिक आयाम' से आप क्या समझते हैं? इस संबंध में श्रीलंका क्यों उल्लेखनीय है?

.....

.....

.....

.....

.....

12.4 विकास में अभाव

द्वितीय विश्व युद्धोपरांत अवधि में, अनेक विकासशील देशों ने नियोजित आर्थिक संवृद्धि की संकेंद्रित रणनीति शुरू की। इससे कुछ देशों में अपेक्षाकृत उच्चतर वृद्धि दरें देखने में आईं, परंतु भारत में 1990 के उत्तरार्ध तक भी ऐसा नहीं हुआ। 1970 के दशक तक यह समझा जाता था कि इनमें से अनेक देशों में संवृद्धि की उच्च दरों से अधिकांश लोगों की जीवन-दशा में कोई सुधार नहीं आया। दूसरे शब्दों में, अपेक्षाकृत उच्चतर संवृद्धि दरों के बावजूद, न सिर्फ गरीबी और बेरोज़गारी के उच्च स्तर बरकरार रहे, बल्कि आय असमानताएँ भी बढ़ी। ''संवृद्धि की सनक'' विषयक आलोचना बढ़ती जा रही थी, जहाँ जनसंख्या के निचले तबकों तक उसकी पहुँच संबंधी मुद्दे पर ध्यान दिए बिना ही जीडीपी वृद्धि पर ध्यान केंद्रित किया जाता था। इससे गरीबी, बेरोज़गारी और असमानता की दृष्टि से 'विकास में कमियों' पर ध्यान आकृष्ट हुआ। इस माँग के चलते, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों और रोज़गार-सृजन नीतियों विषयक एक प्रत्यक्ष प्रयास पर एकाग्रता के साथ ध्यान दिया गया।

12.4.1 निर्धनता

निर्धनता अर्थात् गरीबी मापने के लिए, हर देश ने प्रति व्यक्ति कैलोरी उपभोग और ईंधन, वस्त्र एवं परिवहन जैसी कुछ अनिवार्य वस्तुओं के उपभोग संबंधी मापदण्ड पर आधारित एक गरीबी-रेखा विकसित की हुई है। इसके अलावा, अंतर-देशीय तुलना हेतु कोई सामान्य आधार तलाशने के लिए, 'क्रय-शक्ति क्षमता (PPP) पर प्रति व्यक्ति उपभोग' संबंधी संकल्पना, विकसित हुई है। कीमतों में वृद्धि के कारण इस क्रय शक्ति तुल्यता (PPP) का मापदंड बदलता रहता है, जहाँ इसका वर्तमान स्तर $1.90 प्रतिदिन

पर निर्धारित है। यद्यपि कालांतर में निर्धनता स्तरों में गिरावट देखी गई है, आज भी, दक्षिण-एशियाई देशों (सिवाय श्रीलंका के) में लगभग एक-चौथाई जनसंख्या [20 प्रतिशत स्तर से ऊपर ही] अपना गरीबी अनुपात दर्शाती है (तालिका 12.2)। चूँकि बड़ी आबादियों की वजह से निर्धनता स्तर से नीचे रहने वाले लोगों की बड़ी संख्या सामने आती है, भारत में कम से कम 28 करोड़ लोग (वर्ष 2011 में) निर्धनता स्तर से नीचे ही गुज़र-बसर करते थे।

तालिका 12.2 : आर्थिक विकास में अभाव

देश	गरीबी अनुपात (PPP $1.9 प्रतिदिन से नीचे %)	बेरोज़गारी दर (श्रम बल का प्रतिशत-2018)	असमानता (गिनी सूचकांक) 2018
(1)	(2)	(3)	(4)
भारत	21.9 (2011)	6.5*	40.8
बांग्लादेश	24.8 (2016)	4.3	46.4
नेपाल	25.2 (2010)	1.2	32.8**
पाकिस्तान	24.3 (2015)	3.0	32.1
श्रीलंका	4.1 (2016)	4.3	48.9
चीन	3.1 (2017)	4.4	48.8
दक्षिण-अफ्रीका	55.5 (2014)	27.3	69.6
ब्राज़ील	उपलब्ध नहीं	12.2	52.5
अमेरिका	उपलब्ध नहीं	3.9	39.0
इंग्लैंड	उपलब्ध नहीं	3.8	32.0

*भारत की बेरोज़गारी– PLFS 2017-18, **विश्व बैंक डेटाबेस

स्रोत : 1) गरीबी दर एवं बेरोज़गारी के लिए : विश्व बैंक डेटाबेस।

2) असमानता के लिए : विश्व सुसमानता डेटाबेस (WID), विश्व आर्थिक विकास एवं अनुसंधान संस्थान (WIDER)।

ध्यान देने की बात है कि गरीबी का प्रतिव्यक्ति आय (PCI) से विलोम संबंध होता है, यथा– यह आय जितनी अधिक होगी उतना ही कम गरीबी का स्तर होगा। उदाहरण के लिए, PCI $9770 के साथ चीन 3.1 प्रतिशत का निम्नतम गरीबी अनुपात दर्शाता है, श्रीलंका $4102 PCI के साथ 4.1 प्रतिशत का निम्नतम गरीबी अनुपात दर्शाने वाला दूसरा देश है। विशिष्ट रूप से, 1000-2000 डॉलर की श्रृंखला में अपनी यह आय (PCI) दर्शाने वाले भारत, बांग्लादेश और पाकिस्तान भी अपनी आबादी का एक बट्टे पाँच भाग (20 प्रतिशत) निम्न गरीबी स्तर पर ही देखते हैं। दक्षिण-अफ्रीका एक अत्यांतिक उदाहरण है, जहाँ बेशक उसकी यह आय (PCI) $6374 से ऊँची है, उसका गरीबी अनुपात भी 56 प्रतिशत की ऊँचाई छूता है (वर्ष 2014 में)।

12.4.2 बेरोज़गारी

सभी देशों में व्याप्त बेरोज़गारी की व्याख्या ध्यानपूर्वक किए जाने की आवश्यकता है। ऐसा विकासशील देशों में अनौपचारिक क्षेत्र की बहुत अधिक विद्यमानता के कारण है

क्योंकि निर्धन वर्ग बेरोज़गार रहना बर्दाश्त ही नहीं कर सकता। गरीब आदमी कोई भी काम करने को तैयार हो जाता है– दिहाड़ी या पगार और काम के घंटे या दिन जो चाहे भी हों। तद्नुसार, वे बेरोज़गार नहीं कहे जा सकते, बेशक वे बहुत कम पारिश्रमिक पर प्रायः अल्प-रोज़गार प्राप्त होते हैं। अतएव, भारत जैसे अपेक्षाकृत अल्पविकसित देशों में, जहाँ लगभग 90 प्रतिशत रोज़गार अनौपचारिक है, बेरोज़गारी को प्रायः बहुत निम्न दर्शाया जाता है (वर्ष 2018 में 6.5 प्रतिशत, तालिका 12.2)। दक्षिण-अफ्रीका (27 प्रतिशत) और ब्राज़ील (12 प्रतिशत) में बेरोज़गारी की ऊँची दरें औपचारिक रोज़गार के ऊँचे अनुपात के कारण हैं, जहाँ अल्प-रोज़गार की गुंजाइश कम ही होती है, यथा– या तो आपको औपचारिक रोज़गार मिलता है अथवा आप बेरोज़गार रहते हैं। इसके विपरीत, सभी विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में औपचारिक क्षेत्र में नौकरियों के अभाव के कारण अनौपचारिक क्षेत्र में प्रच्छन्न बेरोज़गारी का बड़ा अनुपात और खुली बेरोज़गारी का ऊँचा अनुपात दोनों ही देखने में आते हैं।

12.4.3 असमानता

यद्यपि भारत समेत अनेक विकासशील देशों ने अपनी विकास रणनीति वितरण स्तर पर न्यायशील संवृद्धि पर ज़ोर देते हुए शुरू की, वर्ष-दर-वर्ष असमानता में इज़ाफा ही होता रहा है। यह विडंबनापूर्ण सत्य ही है कि जब इन देशों में संवृद्धि मंथर गति से हो रही थी, यहाँ असमानता बहुत कम थी। परंतु जब वे उच्च संवृद्धि प्रक्षेप-पथ पर नज़र आने लगे, असमानता भी बढ़ने लगी। असमानता की यह उच्च कोटि अशांतिकर मानी जाती है, इतनी अशांति कर कि अब इसे प्रमुख विकास चुनौती के रूप में देखा जाने लगा है। परंपरागत रूप से, आय वितरण में असमानता गिनी अनुपात के रूप में व्यक्त की जाती है (यथा, गिनी गुणांक को 100 से गुणा कर प्राप्त प्रतिशत के रूप में)। परंतु चूँकि विकासशील देशों में स्वयं आय विषयक आँकड़े ही प्राप्त करना कठिन होता है (पुनः, अनौपचारिक रोज़गार की बड़े पैमाने पर विद्यमानता के कारण), आय का आकलन परिवार उपभोग सर्वेक्षणों के आधार पर परोक्ष रूप से किया जाता है। उपभोग आँकड़ों पर आधारित असमानता अनुमान असमानता का अल्पाकलन ही दर्शाते हैं। बहरहाल, हाल ही में, विश्व असमानता डेटाबेस (WID) की पहल के कारण, सभी देशों के आय विषयक आँकड़े कुछ अनूठी विधियों के आधार पर तैयार किए जा रहे है, जो कि देशों के बीच आँकड़ों को तुलनीय बनाने के लिए अपनाई जाती हैं। उक्त डेटाबेस (WID) द्वारा प्रस्तुत असमानता विषयक आँकड़े (तालिका 12.2 दर्शाते हैं कि दक्षिण-एशियाई विकासशील देशों के बीच, असमानता पाकिस्तान में 32 प्रतिशत से लेकर चीन व श्रीलंका दोनों में 49 प्रतिशत तक व्याप्त है। इसके अलावा, आय बढ़ने के साथ ही, विकासशील देशों में असमानता तेज़ी से बढ़ती दिखाई देती है। यह दक्षिण-अफ्रीका के मामले में भी सत्य है, जहाँ उच्चतम गिनी सूचकांक 70 प्रतिशत नज़र आता है (कुछ मध्य-पूर्वी देशों के बाद विश्व में उच्चतम में एक)। एक अन्य उदाहरण श्रीलंका है जो अधिकांश विकास सूचकों में काफी बेहतर स्थित रखने के बावजूद, दक्षिण एशिया में 49 प्रतिशत (चीन के बराबर) का उच्चतम असमानता सूचकांक दर्शाता है। विकसित देशों के पक्ष में, यह अंक इंग्लैंड में 32 प्रतिशत और अमेरिका में 39 प्रतिशत के बीच है, जो कि नेपाल, पाकिस्तान और भारत की दक्षिण-एशियाई अर्थव्यवस्थाओं से तुलनीय स्तर पर हैं।

बोध प्रश्न 2 दिये गये स्थान मे अपना उत्तर लगभग 50.100 षब्दों में लिखें।

1) 'विकास में अभावों' से आप क्या समझते हैं?

2) क्या यह सत्य है कि प्रतिव्यक्ति आय (PCI) में वृद्धि के साथ गरीबी घटने लगती है? क्या इस विलोम संबंध का कोई अपवाद है? उदाहरण दें।

3) बेरोज़गारी का मापन क्यों विकासशील देशों में एक समस्या बन जाता है?

4) विभिन्न देशों के बीच तुल्य आय के आँकड़े तैयार करने के लिए क्या प्रयास किए गए हैं? इस प्रकार के आँकड़े तमाम देशों में असमानता के विषय में क्या दर्शाते हैं?

5) विकसित देशों में असमानता का विस्तार कितना है? यह विकासशील देशों में असमानता से किस प्रकार तुलनीय है?

12.5 विकास के सामाजिक आयाम

जब से विकास के मापदंड स्वरूप प्रति व्यक्ति आय की सीमाबद्धताओं के विषय में सवाल उठाए जाने लगे हैं, विकास के क्षेत्राधिकार को विस्तारित करने का प्रयास किया जा रहा है। विकास में कमियों, जैसे गरीबी और बेरोज़गारी का लगातार बने रहना, शिक्षा एवं स्वास्थ्य जैसे सामाजिक आयामों की उपेक्षा कर जीडीपी एवं प्रति व्यक्ति जीडीपी की वृद्धि पर ही एकाग्र रहना परिणाम माना जाता है। पिछले दो दशकों में, शिक्षा एवं स्वास्थ्य आयामों पर उत्तरोत्तर ध्यान दिया गया है। ऐसा मुख्य रूप से इस बोध की वजह से है कि शिक्षा एवं स्वास्थ्य में सुधार लोगों की क्षमताएँ बढ़ाने में अतीव महत्त्व रखता है। उत्कृष्ट क्षमताएँ, बदले में, लोगों का उत्पादनकारी निष्पादन बढ़ाने में और विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं का बेहतर सदुपयोग करने में मदद करती हैं। इस भाग में, हम शिक्षा एवं स्वास्थ्य के सूचकों के अनुसार देशों की स्थिति पर विचार करेंगे।

12.5.1 शैक्षिक स्थिति

परंपरागत रूप से, 'वयस्क साक्षरता दर' को शैक्षिक स्थिति के एक सूचक स्वरूप लिया जाता है। इससे अपेक्षा थी कि यह लोगों की शैक्षिक स्थिति में इतिहासपरक उपेक्षा अथवा उपलब्धि को उजागर करेगी। परंतु वर्तमान में, शैक्षिक उपलब्धियाँ शिक्षा की 'सुलभता, निष्पक्षता एवं गुणवत्ता' के पदों में बताई जाती हैं। इस प्रवृत्ति के चलते, यहाँ हमारी चर्चा के केंद्र में रहेगा– 'शिक्षा की विभिन्न स्तरों पर सुलभता'। गुणवत्ता के विषय में, विश्व बैंक द्वारा परिभाषित 'शिक्षा प्राप्ति निर्धनता' सूचक पर विचार किया जाता है। 'ज्ञान-शून्यता' या ज्ञान के अभाव को विश्व बैंक द्वारा इन शब्दों में परिभाषित किया गया है– '10 वर्ष की आयु तक किसी लघु, आयु-अनुकूल मूलपाठ को पढ़ने व समझने में असमर्थ होना।' इस सूचक के केंद्र में आरंभिक बाल्यकाल एवं स्कूली शिक्षा है।

वयस्क साक्षरता अनुपात किसी भी देश की शैक्षिक स्थिति का एक व्यापक सूचकांक प्रदान करता है। इसका अपेक्षाकृत निम्न स्तर शिक्षा के प्रति अपर्याप्त अवधान को इंगित करते हैं। भारत में वयस्क साक्षरता दर (74%) पाकिस्तान (59%) व नेपाल (68%) से बेहतर है परंतु अन्य देश [श्रीलंका (92%), दक्षिण-अफ्रीका (87%), ब्राज़ील (93%) और चीन (97%)] इस लिहाज से भारत से काफी आगे हैं (तालिका 12.3)। 'स्कूली शिक्षा' की सुलभता' के लिहाज से, अधिकांश देशों में प्राथमिक शिक्षा की सुलभता चूँकि लगभग 100 प्रतिशत है, यहाँ माध्यमिक शिक्षा में सकल नामांकन दर (GER) पर विचार किया जाता है। इस संबंध में, दक्षिणा एशिया के देशों में, अब भी श्रीलंका को छोड़कर, अन्य चार देशों के उपयुक्त आयु-वर्ग के एक-चौथाई से कुछ अधिक बच्चे 'स्कूल छोड़ चुके' हैं। पाकिस्तान, जिसकी माध्यमिक शिक्षा में नामांकन दर 43 प्रतिशत है, इन क्षेत्र में अन्य देशों से पीछे ही हैं।

तालिका 12.3 : एक तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में शिक्षा विकास की स्थिति (2018-2019)

देश	वयस्क साक्षरता दर (%)	माध्यमिक शिक्षा में सकल नामांकन	तृतीयक शिक्षा में सकल नामांकन	स्कूल के माध्य वर्ष (25+ जनसंख्या के लिए)	निम्न माध्यमिक शिक्षा संपन्न जनसंख्या %	शिक्षा पर राजकीय व्यय (जीडीपी की तुलना में %)	स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता (ज्ञान-शून्यता)
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
भारत	74	73	28	6.5	37.6	3.8	54.8
बांग्लादेश	74	73	21	6.4	43.6	2.0	57.2
नेपाल	68	74	12	3.5	26.9	5.2	उपलब्ध नहीं
पाकिस्तान	59	43	9	5.0	36.4	2.9	74.5
श्रीलंका	92	98	20	10.9	81.6	2.8	14.4
चीन	97	88	51	10.6	65.3	1.9	18.2
दक्षिण-अफ्रीका	87	105	22	10.2	72.3	6.2	79.8
ब्राज़ील	93	101	51	8.0	60.0	6.2	48.4
अमेरिका	—	99	88	13.8	96.0	5.0	7.9
इंग्लैंड	—	126	60	13.2	99.7	5.5	3.4

स्रोत : विश्व विकास संसूचकों पर विश्व बैंक डेटाबेस

यह निरंतर चिंता का विषय बना हुआ है कि उच्चतर कौशल क्षमताओं के प्रति भावी नौकरियों के वर्धमान पूर्वाग्रह के साथ, रोज़गार में प्रवेशार्थ शिक्षा की न्यूनतम वांछनीयता 'माध्यमिक-शिक्षा संपन्न' हो जाएगी। इस संबंध में, माध्यमिक शिक्षा में 98 प्रतिशत नामांकन के साथ श्रीलंका दक्षिण-एशिय में सर्वश्रेष्ठ विजेता के रूप में खड़ा है। बहरहाल, स्कूली शिक्षा के दो आयाम हैं– एक है नामांकन और दूसरा है 'विभिन्न स्तरों पर स्कूली शिक्षा की संपूर्ति'। इस दृष्टिकोण से, 25 वर्ष या उसके अधिक आयु-वर्ग में जनसंख्या के लिए 'स्कूली शिक्षा के माध्य वर्ष' नेपाल में निम्नतम (3.5 वर्ष) हैं। इसके बाद आते हैं– पाकिस्तान (5 वर्ष), बांग्लादेश (6.4 वर्ष), भारत (6.5 वर्ष), ब्राज़ील (8 वर्ष), चीन (10.6 वर्ष) और श्रीलंका (10.9 वर्ष)। विकसित देशों में, यह माध्यम आज भी ऊँचा है– इंग्लैंड 13.2 वर्ष; अमेरिका 13.8 वर्ष। जब हम तृतीयक शिक्षा में सकल नामांकन दर (GER) पर विचार करते हैं तो भारत (28%) के अंक श्रीलंका (20%) समेत अन्य दक्षिण-एशियाई देशों से बेहतर ही मिलते हैं। परंतु वह चीन और ब्राज़ील (दोनों 51%) से काफी पीछे है। यह प्रतिशतता इंग्लैंड (60%) और अमेरिका (88%) के मामले में और अधिक है। यह दृष्टिकोण व्यापक रूप से साझा किया जाता है कि अधिकांश विकासशील देशों में शिक्षा पर राजकीय व्यय न्यूनतम वांछित (जीडीपी का

6%) से काफी कम होता है। बड़ी दिलचस्प बात है कि ऐसा वस्तुतः अधिकांश दक्षिण-एशिया और चीन (1.9%) में ही नहीं बल्कि अमेरिका (5%) और इंग्लैंड (5.5%) में भी है। ऐसा शायद इसलिए है कि उच्च-आय देशों में काफी उच्चतर शिक्षा निजीकृत हो चुकी है। इसके अलावा, अमेरिका और चीन जैसे देशों की जीडीपी चूँकि भारत के मुकाबले कई लाख करोड़ डॉलर अधिक है, इन देशों की छोटी-सी प्रतिशतता भी अचर पदों में ऊँची ही होती है।

शिक्षा की गुणवत्ता के विषय में, हम 'ज्ञान-शून्यता' के अनुमान प्रयोग करते हैं। चूँकि यह सूचकांक पठन-पाठन कौशल पर ज़ोर देता है, एक प्रकार से यह अनेक विषयों में बुनियादी शिक्षा को केंद्र में रखता है। इसे 'स्कूल छोड़ चुके बच्चों' और 'स्कूल में ऐसे बच्चों का अनुपात जिन्हें न्यूनतम-प्रवीणता हासिल नहीं हुई है' के संयोजन के रूप में मापा जाता है। अतएव, यह 'स्कूली शिक्षा की गुणवत्ता' का मापदंड होता है। भारत और बांग्लादेश के ज्ञान-शून्यता' अनुपात क्रमशः 55 और 57 प्रतिशत है। इसका अर्थ है कि इन दोनों देशों में लगभग दो-तिहाई बच्चे प्रत्याशित प्राप्त ज्ञान-कौशल दर्शाने में असफल रहते हैं। अन्य देशों की सदृश प्रतिशतताएँ इस प्रकार हैं– चीन (18%), श्रीलंका (14%), अमेरिका (8%) और इंग्लैंड (3%)। इसका अर्थ है कि सापेक्षिक पदों में, इन देशों में शिक्षा की गुणवत्ता अभिहित रूप से ऊँची है।

12.5.2 स्वास्थ्य स्थिति

जनस्वास्थ्य की दशा विकास का एक महत्त्वपूर्ण आयाम है जो केवल प्रतिव्यक्ति आय को केंद्र में रखकर शायद स्थिति को स्पष्ट रूप से न दर्शा पाए। इसी प्रकार, महज जीवन-प्रत्याशा के उच्च वर्ष भी स्वास्थ्य के अन्य पहलुओं को संभवतः उजागर न करते हों। उदाहरण के लिए, लगभग सभी देशों में स्त्री जीवन-प्रत्याशा पुरुष जीवन-प्रत्याशा से अधिक है। परंतु इसका अर्थ यह नहीं कि महिलाओं की स्वास्थ्य दशा पुरुषों से बेहतर है। इसीलिए, स्वास्थ्य की एक सूचक शृंखला पर विचार किया जाना आवश्यक है (तालिका 12.4)। भारत में जीवन-प्रत्याशा (69), बांग्लादेश (72) और नेपाल (70) से कम है। ये दोनों देश 'शिशु मर्त्यता दर' (IMR) के जिहाल से भी बेहतर स्थिति दर्शाते हैं [बांग्लादेश (25), नेपाल (27), भारत (30)]। श्रीलंका की यह दर (IMR) निम्नतम (6) है और यह चीन (7), अमेरिका (6) और इंग्लैंड (4) के तुल्य है। मातृ मर्त्यता दर (MMR) श्रीलंका (36) को छोड़कर सभी दक्षिण-एशियाई देशों में बहुत ऊँची (>140) है। एक कहीं अधिक विक्षुब्ध करने वाला अभिलक्षण है – कुपोषण की उच्च दर जो पाँच वर्ष से नीचे के बच्चों में एक प्रकार का 'रुद्ध विकास और अपक्षय' दर्शाती है। रुद्ध विकास की दर भारत, बांग्लादेश और नेपाल में ऊँची है (इन सभी 3 देशों में >35) और पाकिस्तान में यह और भी संकटरपूर्ण (45) है। रुद्ध विकास के उच्च स्तर आरंभिक बाल्यकाल में निकृष्ट स्वास्थ्य को ही दर्शाते हैं, जिसका प्रतिकूल प्रभाव उनके वयस्क होने पर प्रजनन क्षमता पर पड़ता है। स्वास्थ्य सूचकों पर चीन का कार्य-प्रदर्शन इसीलिए अमेरिका व इंग्लैंड जैसे विकसित देशों के तुल्य है।

किसी देश की स्वास्थ्य स्थिति के दो प्रमुख निर्धारक तत्व हैं – (i) कुल स्वास्थ्य व्यय में राजकीय व्यय का प्रतिशत, और (ii) जीडीपी की प्रतिशत स्वरूप व्यक्त स्वास्थ्य पर राजकीय व्यय। दक्षिण-एशिया में चार निकृष्ट प्रदर्शन करने वाले देश (यथा– भारत, बांग्लादेश, नेपाल और पाकिस्तान) ऐसे देशों में भी गिने जाते हैं जहाँ स्वास्थ्य पर राजकीय व्यय अल्पतम (<30%) है। इसका अर्थ है कि इन देशों में लगभग तीन-

चौथाई स्वास्थ्य व्यय 'जेब से खर्च', यथा निजी व्यय, से ही पूरा होता है। इन देशों में जीडीपी के अनुपात स्वरूप भी स्वास्थ्य पर राजकीय व्यय कम है (बांग्लादेश में जीडीपी के 0.4% से लेकर नेपाल में 1.2% तक)। इस संबंध में सरकार की संलिप्ति अन्य देशों में कहीं अधिक है [श्रीलंका (1.7%), चीन (2.9%), ब्राज़ील (3.9%), दक्षिण अफ्रीका (4.4%)]। अमेरिका एवं इंग्लैंड जैसे विकसित देशों में, स्वास्थ्य में सरकार की अंतर्भावितता और भी अधिक है (इंग्लैंड 7.8%; अमेरिका 14%)। तद्नुसार, यह स्पष्ट है कि स्वास्थ्य पर राजकीय वयय में संतोषजनक वृद्धि किए बिना, भारत उच्च संवृद्धि दरों एवं वर्धमान प्रतिव्यक्ति आय के बावजूद विकास के सामाजिक आवाम विषयक अपना संवर्ग सुधारने की स्थिति नहीं आ पाएगा।

तालिका 12.4 : तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में स्वास्थ्य विकास (2017-2018)

देश	जन्म के समय जीवन-प्रत्याशा	शिशु-मर्त्यता दर (प्रति 1000 अमृत जन्म)	मातृ मर्त्यता दर (प्रति 1,00,000 अमृत प्रसव)	5 वर्ष से नीचे के बच्चों में रुद्ध विकास (%)	अपक्षय रोग (कदानुसार वज़न) (5 वर्ष से कम बच्चों का %)	कुल स्वास्थ्य व्यय के %स्वरूप राजकीय व्यय	राजकीय व्यय (जीडीपी का %) स्वास्थ्य पर
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)	(8)
भारत	69	30	145	38.4	21	25.4	0.9
बांग्लादेश	72	25	173	36.6	14.3	18.0	0.4
नेपाल	70	27	186	35.8	9.7	18.6	1.2
पाकिस्तान	67	57	140	45.0	10.5	27.9	0.8
श्रीलंका	77	6	36	17.3	15.1	43.1	1.7
चीन	76	7	29	8.1	1.9	58.0	2.9
दक्षिण-अफ्रीका	64	29	119	27.4	2.5	53.7	4.4
ब्राज़ील	75	13	60	7.1	1.6	33.2	3.9
अमेरिका	79	6	19	2.1	0.5	81.9	14.0
इंग्लैंड	81	4	7	.	.	80.2	7.8

स्रोत : विश्व विकास संसूचक विषयक विश्व बैंक डेटाबेस

12.6 विकास के संश्लिष्ट सूचकांक

भाग 12.3 व 12.5 में हमारी चर्चा के विषय रहे विकास के सामाजिक एवं आर्थिक आयाम संबंधी वैयक्तिक सूचक हमें प्रतिवयक्ति आय जैसे किसी एकल मापदंड द्वारा मिले-जुले विकास को समझने में मदद नहीं करते। इसीलिए, विभिन्न सामाजिक-आर्थिक घटकों को किसी एकल मान अथवा सूचकांक में संयोजित करने के प्रयास किए गए हैं ताकि किसी अपेक्षाकृत अधिक बोधगम्य मापदंड पर पहुँचा जा सके। इनमें से कुछ मापदंड हैं – (i) मानव विकास सूचकांक (HDI), (ii) सामाजिक प्रगति सूचकांक, और (iii) विश्व सुख-सम्पन्नता सूचकांक।

12.6.1 मानव विकास सूचकांक

विकास के किसी बोधगम्य मापदंड के लिए आरंभिक प्रयास वर्ष 1990 में 'मानव विकास सूचकांक' (HDI) के रूप में किया गया। विकास का उद्देश्य लोगों के लिए दीर्घ, स्वस्थ एवं रचनात्मक जीवन भोगने में सक्षम बनाने वाला परिवेश सृजित करना होता है, इस सूचकांक (HDI) ने विकास को 'लोगों के विकल्प विस्तृत करने की प्रक्रिया' के रूप में परिभाषित किया। ये विकल्प तीन अनिवार्य पहलुओं में देखें जा सकते हैं, यथा– (i) एक दीर्घ एवं स्वस्थ्य जीवन व्यतीत करना, (ii) ज्ञान अर्जित करना, और (iii) एक शालीन जीवन-स्तर हेतु आवश्यक संसाधनों की सुलभता। इन तीन पहलुओं के अनुरूप, यह सूचकांक (HDI) तैयार करने के लिए तीन पृथक् घटक चुने जाते हैं। ये घटक हैं – (i) 'जन्म के समय जीवन-प्रत्याशा' में मापित दीर्घायुता, (ii) साक्षरता से मापा जाने वाला ज्ञान, तथा (iii) प्रति व्यक्ति आय द्वारा निरूपित एक शालीन जीवन बिताने हेतु संसाधन। वर्ष 1990 से, कुछ फेर-बदल के साथ, इस सूचकांक (HDI) को अधिकांश देशों में आकलित किया जा रहा है। तालिका 12.5 वर्ष 2019 के लिए HDI मान एवं संवर्ग दर्शाती है।

तालिका 12.5 : विकास के विशद सूचकांक

देश	मानव विकास सूचकांक 2019		सामाजिक प्रगति सूचकांक 2018		विश्व सुख-संपन्नता सूचकांक 2016-18
	मान	संवर्ग अंक	समंक	संवर्ग अंक	संवर्ग अंक
भारत	0.65	129	56.3	100	140
बांग्लादेश	0.61	135	52.2	108	125
नेपाल	0.58	147	56.1	101	100
पाकिस्तान	0.56	152	49.2	115	67
श्रीलंका	0.78	71	68.0	67	130
चीन	0.76	85	64.6	87	93
दक्षिण-अफ्रीका	0.71	113	–	–	106
ब्राज़ील	0.76	79	72.7	49	32
अमेरिका	0.92	15	–	–	19
इंग्लैंड	0.92	15	88.7	13	15

अपने संवर्ग अंक 129 के साथ (कुल 189 देशों में), भारत, बांग्लादेश (135), नेपाल (147) और पाकिस्तान (152) से किंचित् बेहतर स्थिति दर्शाता है। यह चीन (85) और श्रीलंका (71) की तुलना में काफी नीची है। बड़ी ही रोचक बात है कि उक्त सूचकांक (HDI) संवर्ग निर्धारण आय निष्पादन के अनुरूप होता है, विशेषकर पाँच दक्षिण-एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में से तीन के लिए [देखें तालिका 12.1 (कोष्ठक में PCI) : श्रीलंका ($4102), भारत ($2010) और बांग्लादेश ($1698)]। पाकिस्तान की प्रतिव्यक्ति आय नेपाल से अधिक है परंतु HDI संवर्ग के लिहाज से, नेपाल कर संवर्ग (147) पाकिस्तान (152) से बेहतर है।

12.6.2 सामाजिक प्रगति सूचकांक

समाजिक प्रगति सूचकांक (SPI) 'सामाजिक प्रगति नियोग' नामक एक अंतर्राष्ट्रीय असैनिक समाज संगठन द्वारा प्रकाशित किया जाता है। यह सामाजिक प्रगति को इन शब्दों में परिभाषित करता है – 'अपने नागरिकों की मूलभूत मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने की किसी समाज की क्षमता।' यह ऐसे निर्माण खंड स्थापित कर इसकी उपलब्धि को निर्दिष्ट करता है जो नागरिकों एवं समुदायों को अपने जीवन की गुणवत्ता सुधारने व कामय रखने में मदद करते हैं। तद्नुसार, इससे यह सुनिश्चित होता है कि किसी भी देश में अपने पूर्ण सामर्थ्य तक पहुँचने हेतु सभी लोगों के लिए आवश्यक दशाएँ उत्पन्न हों। यह सूचकांक (SPI) 54 संकेतकों पर आधारित है। इनके दायरे में तीन बुनियादी पहलू आते हैं, यथा– मूलभूत मानवीय आवश्यकताएँ, स्वस्थ रहने के आधार, तथा अवसर। यह सूचकांक वर्ष 2014 से नियमित प्रकाशित हो रहा है। हमारे प्रतिदर्श में वर्ष 2018 का यह सूचकांक देशों के संवर्ग अंक इस प्रकार दर्शाता है– भारत (100), बांग्लादेश (108), नेपाल (101) और पाकिस्तान (115)। ये चार देश संवर्गित 146 देशों के लगभग तल पर स्थित हैं। इस लिहाज से चीन (87), श्रीलंका (67), ब्राज़ील (49) और इंग्लैंड (13) काफी ऊपर हैं।

12.6.3 विश्व सुख-सम्पन्नता सूचकांक

विगत जुलाई 2011 में संयुक्त राष्ट्र महासभा ने एक ऐतिहासिक प्रस्ताव पारित किया। इसमें सदस्य देशों को अपने नागरिकों की सुख सम्पन्नता मापने और उसे अपनी शासकीय नीतियों के दिशा-निर्देश हेतु प्रयोग करने के लिए आमंत्रित किया गया था। इसके अनुपालन में, आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (OECD) ने 'आत्मनिष्ठ स्वास्थ्य' के मापन हेतु दिशा-निर्देश' प्रस्तुत किए। प्रथम 'विश्व सुख-सम्पन्नता रिपोर्ट' वर्ष 2012 में प्रकाशित हुई। छह संकेतकों (भ्रष्टाचार, उदारता, जीवन-वर्ष, जीवनानुभव, स्वतंत्रता का भाव और प्रति व्यक्ति जीडीपी) के आधार पर, विश्व सुख-सम्पन्नता सूचक (WHI) एक 0 से 10 के पैमाने पर तैयार किया जाता है। वर्ष 2016-2018 की रिपोर्ट में 156 देशों का सर्वेक्षण कर उन्हें संवर्गबद्ध किया गया (तालिका 12.5)। अपनी संवर्ग अंक 140 के साथ भारत यहाँ इस तुल्य देशों के तल में नज़र आता है। ऊपर विचाराधीन अधिकांश अन्य सामाजिक-आर्थिक आयामों में एक काफी नीचे नज़र आने वाले कार्य-निष्पादक के रूप में पाकिस्तान सुख-सम्पन्नता के लिहाज से सभी छह एशियाई देशों में शीर्ष पर दृष्टिगत होता है (67)। श्रीलंका जो अनेक पहलुओं से एशिया में शीर्ष पर नज़र आया, सुख-संपन्नता में काफी नीचे (130) दिखाई पड़ता है। इस संबंध में, ब्राज़ील (32), अमेरिका (19) और इंग्लैंड (15) अपनी-अपनी श्रेणियों में अग्रणी नज़र आते हैं। 'स्वास्थ्य' का विषय, बहरहाल, आज भी एक नई (nascent) अवधारणा ही है। कालांतर में और अधिक सुधार के साथ, इस असंगति को दूर करने में निश्चय ही सफलता मिलेगी।

बोध प्रश्न 3 दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 षब्दों में लिखें।)

1) किसी देश में शिक्षा का स्तर मापने के लिए ऐतिहासिक रूप से 'वयस्क साक्षरता' को विचाराधीन क्यों रखा गया? हाल ही में पुनरानुस्थापित अवधारणा क्या रही है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) माध्यमिक शिक्षा में सकल नामांकन दर (GER) के संदर्भ में भारत की स्थिति क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) 'स्कूली शिक्षा के मध्य वर्ष' विषयक भारत की स्थिति क्या है? किस लिहाज से, भारत की स्थिति दक्षिण एशिया क्षेत्र के अन्य देशों से बेहतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) किसी देश की स्वास्थ्य प्रस्थिति के दो प्रमुख निर्धारक तत्व बताएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

5) 'सामाजिक प्रगति' को परिभाषित करें। सामाजिक प्रगति सूचकांक के संदर्भ में भारत की सापेक्ष स्थिति क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

12.7 सार-संक्षेप

विभिन्न देशों के सापेक्ष विकास को मापने हेतु एक साधन स्वरूप प्रति व्यक्ति आय (PCI) की सीमाबद्धताओं के चलते 'मानव विकास सूचकांक' और 'सामाजिक प्रगति सूचकांक' जैसे संश्लिष्ट सूचक तैयार करने पड़े। इन मापदंडों के विकास ने उन

बुनियादी कारकों को यथायोग्य महत्त्व दिया जाना संभव बना दिया जो किसी देश में सम्पत्ति सृजन में अहम् होते हैं। इस प्रयास में, शिक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी सामाजिक कारकों को यथोचित अधिप्रतिनिधित्व मिला है। इस इकाई में किए गए 10 देशों के तुलनात्मक वर्णन में, भारत की स्थिति को तीन एशियाई पड़ोसियों– नेपाल, बांग्लादेश और पाकिस्तान – से किंचित् ही ऊपर देखा गया। भारत के लिए शिक्षा एवं स्वास्थ्य दोनों सामाजिक क्षेत्रों में राजकीय व्यय में संतोषजनक वृद्धि अनिवार्यतः आवश्यक है ताकि वह अपने समग्र विकास में वर्तमान श्रेणी बढ़ाकर अपनी स्थिति सुधार सके।

12.8 शब्दावली

ज्ञान-शून्यता : दस वर्ष की आयु तक किसी लघु आयु-अनुकूल मूलपाठ को पढ़ने व समझने में असमर्थता। यह शिक्षा की गुणवत्ता आँकने हेतु विश्व बैंक द्वारा विकसित एक संसूचक है।

सामाजिक प्रगति सूचकांक : अपनी बुनियादी ज़रूरतों को पूरा करने में किसी समाज की क्षमता आँकने हेतु विकसित एक मापदंड। इसके दायरे में मानवीय आवश्यकताओं के अलावा दो अन्य पहलू भी आते हैं, यथा – स्वास्थ्य के मूल आधार एवं अवसर।

12.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Dreze, Jean and Amartya Sen (2013). An Uncertain Glory: India and Its Contradictions, Allen Lane, Penguin Books, London.

Nayyar, Deepak (2019). Resurgent Asia: Diversity in Development, Oxford University Press, New Delhi.

12.10 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) प्रतिव्यक्ति आय (PCI) आय के वितरण से कोई ताल्लुक न रख सिर्फ प्रतिव्यक्ति आय के कुल विस्तार से ही संबंध रखती है। यह विभिन्न देशों को विकसित-विकासशील के रूप में भिन्न-भिन्न दर्शाने और अर्थव्यवस्थाओं को उनके औसत आय-स्तर के आधार पर वर्गीकृत करने के लिए उपयोगी सिद्ध होती है।

2) यह प्राधार विकासशील-विकसित भेद से परे सभी श्रेणियों के देशों का प्रतिनिधित्व करता हो। इसमें विश्व जनसंख्या का यथेष्ट रूप से बड़ा भाग शामिल किया गया हो। चुने गए देशों का नमूना न्यायोचित हो क्योंकि इसमें विश्व जनसंख्या के 50 प्रतिशत से अधिक भाग आ जाता है।

3) जनसंख्या, प्रतिव्यक्ति जीडीपी, जीडीपी में दीर्घावधि औसत वार्षिक वृद्धि दर, कुल रोज़गार में कृषि का अंश तथा जीडीपी में उसका योगदान।

4) वर्ष 1961-2011 के दौरान 6.8 प्रतिशत की एक प्रभावशाली दीर्घावधि वार्षिक औसत वृद्धि दर दर्ज़ कराके चीन ने भारत के मुकाबले एक ऊँची छलाँग लगाई। इस संबंध में भारत यद्यपि कम ही प्रभाव छोड़ने में सफल रहा, उसने हाल के वर्षों में चीन के समकक्ष आ जाने का पराक्रम कर दिखाया है। निम्नतर कृषि रोज़गार एवं कृषि जीडीपी अंश (7.9 प्रतिशत) के पदों में अपने प्राधारिक परिवर्तन

के लिए श्रीलंका का खिसककर उच्चतर मध्यम-आय वर्ग में चले जाना गौरतलब है।

5) बांग्लादेश का 'उच्चतर मध्यम-आय समूह' की ओर खिसक जाना और नेपाल का 'निम्न आय' से खिसरकर 'निम्नतर मध्यम-आय समूह' में चले जाना।

6) प्राधारिक आयाम का अर्थ है – अपने कृषि क्षेत्र से किसी देश का रोज़गार एवं जीडीपी अंश घटाकर प्रभावशाली परिवर्तन। पाँच दक्षिण-एशियाई देशों के उदाहरण में श्रीलंका एकमात्र ऐसा देश है जो चीन से तुल्य स्तरों तक कृषि से अपना रोज़गार जीडीपी अंश घटाने में सफल रहा है।

बोध प्रश्न 2

1) विकास में अभावों का अर्थ है – संवृद्धि के साथ बढ़ती प्रति व्यक्ति आय के बावजूद गरीबी और बेरोज़गारी की व्यापकता। यह समाज में बढ़ती असमानता को भी इंगित करता है।

2) भारत, श्रीलंका और चीन के उदाहरण में देखा जा सकता है कि बढ़ती आय (जीडीपी) के साथ गरीबी घटी है। बहरहाल, दक्षिण-अफ्रीका के मामले में, आय तो बढ़ी है मगर निर्धनता अनुपात भी बहुत ऊपर चला गया है (वर्ष 2014 में 56 प्रतिशत)।

3) ऐसा इसलिए है कि यहाँ रोज़गार का बड़ा भाग अनौपचारिक है, जहाँ प्रच्छन्न बेरोज़गारी बहुत अधिक होती है।

4) विभिन्न देशों के बीच तुल्य आय विषयक आँकड़े तैयार करने के लिए विश्व असमानता डेटाबेस (WID) द्वारा अनूठी विधियाँ अपनाई गई हैं। इसके रुझान दर्शाते हैं कि दक्षिण-एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में असमानता भारत और बांग्लादेश द्वारा 40^{+} प्रतिशत जबकि नेपाल और पाकिस्तान द्वारा 30 प्रतिशत से किंचित् ही ऊपर रहकर दर्शाई जाती है। श्रीलंका और चीन में यह उच्चतम (दोनों 49 प्रतिशत के बराबर) है।

5) विकसित देश भी उच्च असमानता दर्शाते हैं, यथा– इंग्लैंड 32 प्रतिशत और अमेरिका 39 प्रतिशत (वर्ष 2018 में)। यह इसी वर्ष (2018 में) नेपाल 33 प्रतिशत और पाकिस्तान 32 प्रतिशत से तुल्य है।

बोध प्रश्न 3

1) ऐसा इसलिए है कि इससे अपेक्षित था कि यह लोगों की शैक्षिक प्रस्थिति में ऐतिहासिक उपेक्षा अथवा उपलब्धि को उजागर करेगा। अब हाल ही में ज़ोर शिक्षा की 'सुलभता, निष्पक्षता एवं गुणवत्ता' पर दिया जाने लगा है।

2) उसे 25 प्रतिशत से भी अधिक पात्र छात्र माध्यमिक-शिक्षा प्रणाली से बाहर दर्शाने वाले बांग्लादेश और नेपाल की श्रेणी में रखा जाता है।

3) भारत 6.5 वर्ष पर तय स्कूली शिक्षा के अपने मध्य वर्षों के साथ तुल्य माने गए 10 देशों के लगभग बीच में दर्शाया जाता है। तृतीयक शिक्षा में नामांकन के लिहाज से, भारत की स्थिति दक्षिण अफ्रीका समेत दक्षिण एशिया के अन्य चार देशों से बेहतर है।

4) i) कुल स्वास्थ्य व्यय की प्रतिशतता स्वरूप राजकीय व्यय, तथा

ii) जीडीपी की प्रतिशतता में व्यक्त स्वास्थ्य पर सरकारी खर्च।

5) सामाजिक प्रगति को इन शब्दों में परिभाषित किया जाता है – अपने नागरिकों की मूलभूत मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु किसी समाज की क्षमता। सामाजिक प्रगति सूचकांक (SPI) के जिहाज से, भारत, बांग्लादेश, नेपाल व पाकिस्तान से बस थोड़ा ही ऊपर दिखाई पड़ता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 13 व्यापार और भुगतान-शेष*

सरंचना

13.0 उद्देश्य

13.1 विषय प्रवेश

13.2 भुगतान-शेष (BoP) खाता

- 13.2.1 भुगतान-शेष खाते के घटक
- 13.2.2 भुगतान-शेष खाता घाटा अथवा अधिशेष
- 13.2.3 चालू खाता घाटा (CAD)

13.3 भारत में पूँजी खाते का उदारीकरण

13.4 चालू-खाता घाटे का अंतर्राष्ट्रीय तुलनात्मक वर्णन

- 13.4.1 चालू-खाता घाटा और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ
- 13.4.2 चालू-खाता घाटा और विकसित अर्थव्यवस्थाएँ
- 13.4.3 निपटान खाता
- 13.4.4 चालू-खाता शेष को प्रभावित करने वाले कारक

13.5 सार-संक्षेप

13.6 शब्दावली

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

13.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि :

- व्यापार के तीन मापन-आयाम स्पष्ट करते हुए, उसके लाभ इंगित कर सकें;
- पदबंध 'भुगतान-शेष' (BoP) को परिभाषित कर सकें;
- किसी भुगतान-शेष खाते का वर्गीकरण प्राधार स्पष्ट कर सकें;
- 'भुगतान-शेष खाता घाटा अथवा अधिशेष' संबंधी संकल्पनाओं को निरूपित कर सकें;
- बता सकें कि क्यों उच्च 'चालू-खाता घाटा' (CAD) किसी अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य के लिए अवांछित है;
- भारत में 'पूँजी खाते का उदारीकरण' प्रक्रिया का ब्यौरा पेश कर सकें;
- विश्व की विकसित एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के बीच चालू-खाता घाटे का तुलनात्मक वर्णन कर सकें;
- भुगतान-शेष में 'निपटान खाते' का महत्त्व उजागर कर सकें; तथा
- भुगतान-शेष में 'चालू-खाता शेष' को प्रभावित करने वाले कारक गिना सके।

* सुश्री विशाखा गोयल, सहायक आचार्य, शारदा विश्वविद्यालय

13.1 विषय प्रवेश

विकास के आदिमकालीन चरणों में भी अर्थव्यवस्थाएँ अन्य देशों के साथ व्यापार में लिप्त रहती थीं। अब, अधिकांश आधुनिक अर्थव्यवस्थाएँ मुक्त व्यापार में लगी हैं। अन्य अर्थव्यवस्थाओं के साथ इस प्रकार की अंतर्क्रियाएँ उपभोक्ताओं के लिए विकल्प विस्तीर्ण कर देती हैं। उत्पादनकर्ता अपना उत्पादन मान बढ़ा सकते हैं और अपने माल के लिए नए बाज़ार तलाश सकते हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, तद्नुसार, उत्पादन एवं उपभोग दोनों में मदद करने की संभावना से पूर्ण होता है। इससे देशों को भी यह अवसर मिलता है कि वे अपने यहाँ विदेशी कंपनियों को अपनी उत्पादन इकाइयाँ स्थापित करने दें। ये लेन-देन सभी कार्य विवरणों का कोई क्रमबद्ध लेखा रखने की आवश्यकता उत्पन्न कर देते हैं। वह खाता जो ऐसे सभी कार्य विवरणों का लेखा करता है, 'भुगतान-शेष (BoP) खाता कहलाता है। भुगतान-शेष की संकल्पना व्यापार विनिमय दर से संबद्ध अंतर्राष्ट्रीय विवादों को समझने के लिए आवश्यक होती है। वैश्वीकृत जगत में, विदेश व्यापार किसी भी अर्थव्यवस्था के विकास में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतएव, विदेशी व्यापार के उपाय करना ज़रूरी होता है ताकि सरकार अपनी अर्थव्यवस्था को वांछित दिशा में मोड़ने हेतु आवश्यक कदम उठा सके। विदेश व्यापार का विस्तार उसके इन पदों में आकलित किया जाता है – (i) परिमाण, (ii) सम्मिश्रण, एवं (iii) लक्ष्य। व्यापार का परिमाण हमें अंतर्राष्ट्रीय सौदों का आकार बताता है। इसे मूल्य के पदों में मापा जाता है और इसका लेखा किसी देश के निर्यात एवं आयात दोनों के लिए अलग-अलग किया जाता है। व्यापार के सम्मिश्रण का अर्थ है – वह प्रमुख जिंसें (commodities) जिनका कोई देश निर्यात और आयात करता हो। विदेशी व्यापार का लक्ष्य शेष जगत के साथ आर्थिक अनुबद्धताओं को इंगित करता है। यह हमें उन देशों का ज्ञान कराता है जिनको भारत अपना माल निर्यात करता है और उन देशों का भी जिनसे हम आयात करते हैं। तद्नुसार, लक्ष्य में निर्यात के गंतव्य और हमारे आयात के स्रोत शामिल होते हैं। यह देश के आर्थिक विकास की गति दर्शाता है। ऐसा इसलिए है कि जब कोई देश बड़ी संख्या में देशों के साथ व्यापार शुरू करता है तो उसके आर्थिक विकास की गति तेज़ हो जाती है।

13.2 भुगतान-शेष (BoP) खाता

विदेश व्यापार में अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा की आवश्यकता पड़ती है। यदि किसी देश का निर्यात बहुत अधिक हो तो वह रोकड़ बाकी अर्थात् अधिशेष विदेशी-मुदा संचित कर सकता है। परंतु यदि किसी विकासशील देश का आयात उसके निर्यात की तुलना में बहुत अधिक हो तो वहाँ सदैव विदेशी मुद्रा का अभाव दिखाई पड़ता है। अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में संतुलन हेतु संघर्षरत रहना आवश्यक होता है ताकि आवश्यक आयात हेतु भुगतानार्थ अपेक्षित विदेशी मुद्रा की व्यवस्था हो सके। विदेशी मुद्रा भंडार पर नज़र रखने के लिए, एक लेखा-विवरण तैयार किया जाता है, जिसमें किसी वित्त वर्ष में अन्य देशों के साथ देश के लेन-देनों विवरणों का सही-सही वर्णन किया जाता है। इसी को उस देश का 'भुगतान-शेष' (BoP) कहा जाता है। यह उस देश और शेष जगत के निवासियों के बीच सभी आर्थिक सौदों का एक क्रमबद्ध लेखा होता है। इसमें शामिल होते हैं – (i) निर्यातित वस्तुओं, दी गई सेवाओं एवं निवासियों द्वारा प्राप्त पूँजी के कारण सभी प्राप्तियाँ, तथा (ii) आयातित वस्तुओं, ली गई सेवाओं एवं अनिवासियों अथवा विदेशियों को हस्तांतरित पूँजी हेतु निवासियों द्वारा किए गए सभी भुगतान।

भुगतान शेष सरकार को वे आँकड़े उपलब्ध कराता है। जो राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों के संरूपण हेतु आवश्यक होते हैं। उदाहरण के लिए, देश के ऋणों को कम करने के लिए, सरकार कुछ आयात-वस्तुओं पर कर वसूल सकती है। इस प्रकार का कर किसी भी देश का 'चालू खाता घाटा' (CAD) कम करने में योगदान देता है। यह घाटा (CAD) एक ऐसी दशा बताता है जहाँ किसी देश का आयात मूल्य (M) उसके कुल निर्यात मूल्य (X) से अधिक होता है, यथा $(M - X) > 0$ अथवा $(X - M)$ यानी $CAD < 0$। भुगतान-शेष का चालू खाता निर्यात एवं सेवाओं के विवरण का प्रग्रहण कर लेता है जो कि अपने व्यापार साझेदारों के साथ किसी भी देश की व्यापार नीति तय करने के लिए आवश्यक होता है। इसी प्रकार, भुगतान-शेष संबंधी जानकारी फर्मों, निवेशकों एवं बैंकों के लिए भी ज़रूरी होती है, बेशक वे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार एवं वित्त में शामिल न हों। उसकी रुचि किसी देश की वित्तीय स्थिरता का मूल्यांकन करने में हो सकती है।

13.2.1 भुगतान-शेष खाते के घटक

भुगतान-शेष खाते के वर्गीकरण प्राधार में तीन लेखा शीर्षक आते हैं, यथा – (i) चालू खाता, (ii) पूँजी खाता और (iii) आरक्षित परिसंपत्ति खाता। चालू खाता किसी ज्ञात वित्त वर्ष के दौरान वस्तुओं एवं सेवाओं के प्रवाह संबंधी सभी चालू वर्ष सौदों (निर्यात एवं आयात) का लेखा करता है। इसके दो उपभाग होते है, यथा– 'व्यापार खाता' जो 'वस्तुओं' अर्थात् माल का निर्यात एवं आयात [इसे व्यापार-शेष (BoT) कहा जाता है] तथा 'अन्य अदृश्य वस्तुओं का लेन-देन (जैसे– वित्तीय सेवाएँ, बीमा सेवाएँ, प्रेक्षण सेवाएँ, आदि) संबंधी लेखा करता है। परवर्ती (यथा– 'अदृश्य वस्तुओं का लेन-देन'), तद्नुसार, किसी वित्त वर्ष के दौरान मुख्यतः सेवाओं के आदान-प्रदान का लेखा होता है [अतः 'सेवा-शेष (BoS) खाता' कहलाता है]। दूसरे उपभाग में, BoT और BoS एक साथ मिलकर BoP खाते का 'चालू खाता' दर्शाते हैं। पूँजी खाता (भुगतान-शेष खाते में) किसी देश व शेष जगत के बीच पूँजी एवं भुगतान की प्राप्ति दर्शाता है। इसमें विदेशी निवेश प्रवाह, बाहरी ऋण, ऋणादान एवं ऋण अथवा दान जैसी अन्य मदें भी शामिल होती हैं। भुगतान-शेष खाते का एक तीसरा महत्त्वपूर्ण घटक है – सरकार का 'औपचारिक आरक्षित परिसंपत्तियाँ' खाता। इसमें आते हैं– स्वर्ग भंडार, विनिमय विदेशी मुद्राओं संबंधी उपलब्धियाँ तथा 'विशेष आहरण अधिकार' (SRDs)। यह खाता चालू एवं पूँजी खाता घाटों के लिए एक संतुलनकारी मद के रूप में काम करता है और इस प्रकार 'विदेशी मुद्रा निधि' विषयक औपचारिक खाते के रूप में भी भूमिका निभाता है। इस खाते में उस स्थिति में गिरावट दिखाई देगी जब विदेशी मुद्रा का निवल बहिर्वाह निवल अंतर्वाह की अपेक्षा अधिक हो और जब चालू एवं पूँजी खातों पर कुल अदायगी कुल प्राप्तियों से अधिक हो। आदर्शतः, चालू खाता एवं पूँजी खाता पर शेष को 'औपचारिक आरक्षित परिसंपत्तियाँ' खाते द्वारा प्रतिपूर्तित किए जाने की आवश्यकता पड़ती है।

13.2.2 भुगतान-शेष खाता घाटा अथवा अधिशेष

किसी देश के समक्ष एक भुगतान-शेष घाटे की स्थिति तब होती है जब उसके कुल आयात (वस्तुओं, सेवाओं एवं निवेश आय, यथा – पूँजी अंतर्वाह) का मान निर्यात (वस्तुओं, सेवाओं एवं पूँजी बहिर्वाह) के मान से अधिक हो। इसके विपरीत, किसी देश के सम्मुख उस समय भुगतान शेष खाते का रोकड़ बाकी अर्थात् अधिशेष होता है जब 'वस्तुओं, सेवाओं एवं पूँजी अंतर्वाह' संबंधी निर्यात का कुल मूल्य 'वस्तुओं, सेवाओं एवं

पूँजी बहिर्वाह' के निर्यात के मान से अधिक हो। औपचारिकतः, 'राष्ट्रीय आय लेखा' सर्वसमिका को 'कुल व्यय' एवं 'कुल उत्पादन' के पदों में निम्वत् लिखा जा सकता है –

$$\text{कुल व्यय (AE)} = \text{उपभोग व्यय (C)} + \text{निजी निवेश (I)} + \text{सरकारी खर्च (G)} + \text{निर्यात (X)} \quad (13.1)$$

$$\text{तथा कुल उत्पादन (Y)} = \text{उपभोग (C)} + \text{बचत (S)} + \text{कर (T)} + \text{आयात M)} \quad (13.2)$$

अर्थव्यवस्था संतुलन में होगी यदि AE = Y, यथा –

$$C + I + G + X = C + S + T + M \quad (13.3)$$

$$\text{अथवा, } I + G + X = S + T + M \quad (13.4)$$

$$\text{अथवा, } X - M = (S - I) + (T - G) \quad (13.5)$$

घटक (X – M) निवल निर्यात एवं आयात (यथा, चालू खाता घाटा) है, (S – I) 'बचत – निवेश अंतर' है और (T – G) 'बजट घाटा' है। एक संतुलित बजट (यथा, T = G) की कल्पना करते हुए, अर्थव्यवस्था में निवल निर्यात का संबंध बचत-निवेश अंतर से जोड़ा जा सकता है। अतः, 'चालू खाता घाटा' (CAD) वाले किसी भी देश को अपना घाटा अंतर्राष्ट्रीय ऋणादान से पूरा करना होगा। हम, तद्नुसार, देख सकते हैं कि क्यों 'चालू खाता घाटा' 'भुगतान-शेष धाटे' के समान ही होता है।

13.2.3 चालू खाता घाटा (CAD)

आदर्शतः CAD [यथा, (X-M)] धनात्मक होना चाहिए। किसी ऋणात्मक CAD का अर्थ होगा कि कुल आयात कुल निर्यात से अधिक है। इस प्रकार के किसी भी घाटे का वित्तीयन विदेशी निवेशों अथवा कर्ज़ से किया जा सकता है। यह बहरहाल, समस्यात्मक हो सकता है यदि देश अपना कर्ज़ चुकाने में अक्षम हो। इस प्रकार की दशाओं में, किसी भी देश को 'भुगतान-शेष संकट' से ग्रस्त माना जाता है। एक अन्य तरीका जिससे CAD का वित्तीयन किया जा सकता है, बाहरी ऋणदान है अर्थात् अन्य देशों से अथवा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसे वित्तीय संस्थाओं से उधार लेना। आगे चलकर, यह भी, समस्यात्मक हो सकता है यदि देश अपना कर्ज़ चुकाने में अक्षम हो। इस प्रकार की दशाओं में, किसी भी देश को 'भुगतान-शेष संकट' से ग्रस्त माना जाता है। उपभोग का वित्तीयन ऋणादान से करना धारणीय नहीं कहलाता। ऐसा इसलिए है कि बड़े ब्याज़ भुगतान वाले देशों में प्रायः निवेश कम होता है। दीर्घकालीन संवृद्धि के लिए, अधिक निवेश करना ज़रूरी होता है क्योंकि वर्तमान निवेश ही भावी संवृद्धि को उदीप्त करता है।

चालू खाता घाटा बढ़ने का अर्थ होता है कि देश को घरेलू मुद्रा की अपेक्षा विदेशी मुद्रा की अधिक आवश्यकता है। विदेशी मुद्रा की अत्यधिक माँग का अर्थ, दूसरी ओर, होगा– अशक्त घरेलू मुद्रा। इसका परिणाम लागत-प्रेरित मुद्रास्फीति में दिखाई पड़ सकता है, ख़ासकर यदि देश के विदेशी पिटक में अधिक आयातित वस्तुओं का समावेश हो। बढ़ता 'व्यापार घाटा' भी इसी बात का द्योतक हो सकता है कि घरेलू उद्योग अपेक्षाकृत सस्ते आयातित माल का मुकाबला नहीं कर पा रहा है। इससे रोज़गार में गिरावट आ सकती है क्योंकि घरेलू विनिर्माताओं को अपने संस्थान बंद करने पड़ सकते हैं। यह, ख़ासकर व्यापार-घाटा वाले देश में अभी नए-नए शुरु हुए

उद्योगों के लिए सही सिद्ध हो सकता है। इस प्रकार की स्थिति में, श्रमिक संघ आयात के खिलाफ संरक्षणकारी कदम उठाए जाने की माँग कर सकते हैं। इन कारकों के आलोक में, चालू खाता घाटा नियंत्रण में रखा जाना आवश्यक है।

बोध प्रश्न 1 (नीचे दिए गए सभी प्रष्नों के उत्तर लगभग 50–100 षब्दों में लिखें।)

1) 'भुगतान-शेष खाता' से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) वे तीन आयाम बताएँ जिनके पदों में भुगतान-शेष खाता मापा जाता है। ये किस प्रकार उपयोगी सिद्ध होते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) किसी देश के भुगतान-शेष से आप क्या समझते हैं? यह किस प्रकार से उपयोगी सिद्ध होता है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) भुगतान-शेष के तीन प्रमुख 'खाता शीर्षक' बताएँ। विशेष रूप से, ' भुगतान-शेष के चालू खाता' के दो उप-शीर्षक क्या हैं और वे क्या प्रग्रहण करते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5) 'चालू खाता घाटा' (CAD) क्या है? किसी बढ़ते चालू खाता घाटे से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

13.3 भारत में पूँजी खाते का उदारीकरण

पूँजी खाता उदारीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे कोई देश अंततोगत्वा अपने भुगतान-शेष के 'पूँजी खाते' पर पूर्ण विनिमेयता का दर्ज़ा पा लेता है। 'पूँजी खाते' को उदारीकृत करने से पूर्व 'चालू खाते को उदारीकृत करना अभीष्ट होता है। ऐसा इसलिए है कि पूँजी खाते का उदारीकरण किसी भी अर्थव्यवस्था को बड़े-बड़े विनिमय दर उतार-चढ़ावों के प्रति अधिक संवेदनशील बना देता है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों में व्यापक सट्टेबाजी पूँजी के अतीव अंतर्वाह एवं बहिर्वाह को प्रेरित कर सकती है, जिससे पूँजी खाते में अस्थिरता उत्पन्न होगी। इसी प्रकार, अतीव पूँजी अंतर्वाह घरेलू मुद्रा पर वृद्धि दबाव डालेंगे, जिससे घरेलू निर्यात की प्रतिस्पर्ध्येता प्रभावित होगी, जो कि बदले में, चालू खाता घाटा (CAD) और बढ़ा देगी। तद्नुसार, इस सहज क्रम का पालन किया जाए कि पहले 'चालू खाता' उदार बनाएँ और फिर 'पूँजी खाता विनिमेयता' अपनाएँ।

'पूँजी खाता उदारीकरण' संबंधी भारत के अनुभव को तीन चरणों में देखे जाने की ज़रूरत है– (i) वर्ष 1950-1990, (ii) वर्ष 1990-92 तथा (iii) वर्ष 1992 उपरांत (उत्तर-उदारीकरण)। अपनी स्वतंत्रताप्राप्ति के आरंभिक वर्षों में भारत का ध्यान सार्वजनिक क्षेत्र में औद्योगिक विकास पर ही रहा। इसमें प्रौद्योगिकी एवं यंत्र-समूह का (खासकर पूँजीगत वस्तुओं का) आयात अपेक्षित था, जिसने भारत के भुगतान-शेष खाते पर दबाव डाला। इसके बावजूद, भारत ने वर्ष 1950 से 1954 तक भुगतान-शेष के अपने 'चालू खाते' में रोकड़ बाकी देखा। द्वितीय पंचवर्षीय योग्या 1956–61 के दौरान, मूल एवं भारी उद्योगों के विकास के माध्यम से तीव्र उद्योगीकरण को अपनाया गया। इसने 1960 के दशक के दौरान 'चालू खाते' में 'प्रतिकूल' शेष की ओर अग्रसर किया। भारत को विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋणों के माध्यम से बाहरी मदद लेनी पड़ी। भारी व्यापार घाटों, ऋण देयताओं एवं विदेशी मुद्रा कोषों में औंधे मुँह गिरावट ने वर्ष 1966 में रुपये के सर्वप्रथम अवमूल्यन की ओर अग्रसर किया। 1970 के दशकारांभ में, यद्यपि निर्यात बढ़ा, आयात में कहीं अधिक तेज़ी से उछाल आया, जिसने निरंतर व्यापार घाटों की ओर अग्रसर किया। इसके बावजूद, वर्ष 1973–74 में, भारत ने यथेष्ट 'चालू खाता अधिशेष' का लाभ उठाया। यह मुख्यतः 'अदृश्य हस्तांतरणों' (यथा– विदेशी मदद के अंतर्वाह) में अधिशेष के कारण हुआ। वर्ष 1973 के पश्चात्, अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में कच्चे तेल की कीमतों में क्रमिक वृद्धि देखी गई, जिसके परिणामस्वरूप, देश के कुल आयात बिल में तेज़ उछाल देखा गया। वर्ष 1980–83 की तीव्र विश्व मंदी के कारण निर्यात निष्पादन हानि ही उठाता रहा। इस अवधि में अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को पुनर्भुगतानों ने भारत के भुगतान-शेष पर अतिरिक्त

दबाव डाला। सार्थक बाहरी मदद, वाणिज्यिक ऋणादान एवं अनिवासी भारतीयों की जमाओं के बावजूद, भारत पर बाहरी कर्ज़ भी बढ़ गया।

वर्ष 1990–91 तक, भारत तीन प्रमुख घटनाक्रम देख चुका था, जिन्होंने एक 'भुगतान-शेष संकट' में योगदान दिया। प्रथमतः, 1980 के दशकांत में, तेल की कीमतों में तेज़ उछाल देखा गया। इसके बाद आया – खाड़ी युद्ध, जिसने देश के तेल आयात बिल को और वृद्धि की ओर अग्रसर किया। दूसरे, अनेक भारतीय विदेशों में कार्यरत थे और वे प्रेषित रुपयों के उत्तम स्रोत सिद्ध होते थे। खाड़ी युद्ध की वजह से भारतीय श्रमिकों को घर वापस लौटना पड़ा, जिससे उनकी ओर से प्राप्त होने वाली रकम पर भी लगाम लग गई। तीसरे, सोवियत संघ (USSR) जो भारतीय निर्यातकों के लिए एक बड़ा गंतव्य था, अनेक छोटे-छोटे देशों में विघटित होते देखा गया। इन सभी कारकों ने भारत के विदेशी मुद्रा कोषों को ह्रासोन्मुखी हो जाने की ओर अग्रसर किया, जो अगस्त 1990 के अंत में रु.5480 करोड़ के स्तर से जनवरी 1991 में गिरकर मात्र रु.1666 करोड़ रह गए (यथा– कोषों में लगभग 70 प्रतिशत की औंधे मुँह गिरावट)। जून 1991 तक आते-आते विदेशी मुद्रा कोष इस हद तक गिर गए कि आवश्यक आयात के वित्तीयन हेतु भी वे अपर्याप्त रहे। परिणामतः, भारतीय अर्थव्यवस्था में तीव्र मुद्रास्फीति देखी गई, जिसने भारत को स्वतंत्रताप्राप्ति से अब तक का सबसे भीषण 'भुगतान-शेष संकट' का अनुभव करने को अग्रसर किया।

वर्ष 1991 में आरंभ आर्थिक सुधारों के दौरान, उक्त संकट को नियंत्रित करने के लिए समष्टि-अर्थशास्त्रीय स्थिरीकरण प्रयास किए गए। व्यापार-नीति में कठोर परिवर्तनों, रुपये के अवमूल्यन, रुपये की विनिमेयता, शुल्क-दर कटौतियों एवं आयात उदारीकरण की शुरुआत की गई। पहली बार, वर्ष 1992–93 के केंद्रीय बजट में भारतीय रुपये को अंशतः विनिमय बनाया गया। यह शेष जगत के साथ भारतीय अर्थव्यवस्था के एकीकरण हेतु एक अपरिहार्य कदम था। इसके तहत 60 प्रतिशत विनिमय आय बाज़ार-निर्धारित विनिमय दर पर विनिमेय थी जबकि शेष 40 प्रतिशत आय औपचारिक रूप से निर्धारित विनिमय दर पर। (किसी भी मुद्रा की) विनिमेयता से तात्पर्य होता है कि वह स्वतंत्र रूप से किसी भी अन्य मुद्रा में बदली जा सकती है। विनिमेयता, तद्नुसार, 'चालू खाते' पर व्यापार एवं भुगतानों में परिमाणात्मक प्रतिबंधों के निराकरण के लिहाज़ से आज़ादी देती है। यह एक ऐसी व्यवस्था लागू कर देती है जिसमें बाज़ार विनिमय दर माँग एवं आपूर्ति शक्तियों की मुक्त अंतर्क्रिया द्वारा तय करता है। वर्ष 1993-94 के दौरान, भुगतान-शेष की स्थिति में सुधार निर्यात वृद्धि, कच्चे तेल की अंतर्राष्ट्रीय कीमतों में गिरावट और गैर-तेल आयात की वृद्धि में ढील की वजह से आया। वर्ष 1994–95 के दौरान निर्यात और आयात दोनों सार्थक रूप से बढ़े (निर्यात 18.4 प्रतिशत तक और आयात 22.9 प्रतिशत तक)। इसकी वजह से, भारत के 'अदृश्य भुगतानों' में उल्लेखनीय वृद्धि हुई और परिणामतः भारत का 'चालू खाता घाटा' (CAD) भी बढ़ा। परंतु इस अवधि में कुल पूँजी-प्रवाह वित्तीय आवश्यकताओं से कहीं अधिक रहा और इसलिए विदेशी मुद्रा कोष में भी अच्छी वृद्धि हुई। निर्यात एवं आयात में यह प्रोत्कर्ष वर्ष 1995-96 में भी जारी रहा। लेकिन, साथ ही उक्तघाटा (CAD) बढ़कर सकल घरेलू उत्पाद के 1.7 प्रतिशत तक जा पहुँचा। वर्ष 2000–01 में यह घाटा (CAD) घटकर जीडीपी के लगभग 0.5 प्रतिशत पर आ गया। उसके बाद से वह मुख्यतः कम (लगभग 2–3 प्रतिशत की सीमा तक) ही बना हुआ है (यथा– वर्ष 2016–17 में GDP का 0.7 प्रतिशत और वर्ष 2017–18 के प्रथम अर्द्धांश में GDP का 18 प्रतिशत)। वर्ष 2002–03 से अब तक सकल प्राप्तियों एवं भुगतानों में महत्त्वपूर्ण

वृद्धि के कारण भारत के 'अदृश्य खाते– में तीव्र वृद्धि दखी गई है। सेवा निर्यात में विपुल वृद्धि, खासकर सॉफ्टवेयर एवं सूचना प्रौद्योगिकी (IT) सेवाओं में, और समुद्रपार से प्रेषित रुपयों ने इसमें काफी योगदान दिया है। वर्ष 2001–08 की अवधि में, 'अदृश्य प्राप्तियाँ' चालू खाता प्राप्तियों का लगभग 45 प्रतिशत रहीं, जबकि अदृश्य भुगतान चालू खाता भुगतानों का लगभग 25 प्रतिशत रहे। 'अदृश्य खाते' में भुगतानों की तुलना में प्राप्तियों की निचली स्थिति ने वर्ष 2001–08 की अवधि में लगभग 35 प्रतिशत की औसत वृद्धि दर्शाते हुए अधिशेष वृद्धि में योगदान दिया जिसने अनुरूप अवधि में व्यापार घाटे की पूरी तरह वित्त पूर्ति कर दी।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत में उक्त उपलब्धियाँ रुपये के अधिमूल्यन, ऊँची ब्याज़ दरों, उत्तरोत्तर बढ़ती तेल की कीमतों और विश्वभर में प्रमुख व्यापारी देशों में आम आर्थिक मंदी के बावजूद प्राप्त की है। यहाँ यह भी देखने की बात है कि पूँजी अंतर्वाहों में वर्धमान रुझान अपने संयोजन में एक बदलाव के साथ देखने में आया है (जैसे– सेवा क्षेत्र में उछाल)। एक अन्य स्वागत योग्य अभिलक्षण रहा – सकल प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (FDI) अंतर्वाह में वृद्धि। वर्ष 2005 और 2006 में, भारत चीन के बाद दूसरे सर्वाधिक आकर्षक (FDI) गंतव्य के रूप में उभरा। इसने समग्र भुगतान-शेष अधिशेष की ओर अग्रसर किया, जिसके परिणामस्वरूप विदेशी विनिमय निचय में अभिवृद्धि हुई। वर्तमान में, 'सेवा खाते' पर रोकड़ बाकी के कारण एक निम्नतर (CAD) के साथ वृहद् माल व्यापार घाटे का सहअस्तित्व देखा जा रहा है।

बोध प्रश्न 2 (दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 षब्दों में लिखें।)

1) अपने 'पूँजी खाते' से पूर्व भुगतान-शेष के 'चालू खाते' को उदारीकृत करना क्यों पंसद किया जाता है? 'पूर्ण विनिमेयता' से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय रुपये का प्रथम अवमूल्यन कब किया गया? किन परिस्थितियों ने इस ओर अग्रसर किया?

.....

.....

.....

.....

.....

3) कुछ ऐसी दशाओं का वर्णन करें जिन्होंने भारत की 1970 एवं 1980 के दशकों के दौरान, भुगतान-शेष के मोर्चे पर अस्थिरता को बनाए रखा था।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

4) स्वतंत्रता प्राप्ति पश्चात् भारत के भीषणतम 'भुगतान-शेष संकट' से निबटने के लिए 1990 के दशकारंभ में कौन-से नीति-परिवर्तन लागू किए गए?

.....

.....

.....

.....

.....

5) 1990 के दशकारंभ में भुगतान-शेष मोर्चे पर सहजता लाने में किन कारकों ने योगदान दिया? 1990 के दशक से दो हजार के दशकारंभ तक चालू-खाता घाटे का स्तर क्या रहा?

.....

.....

.....

.....

.....

6) 2000 के दशकांत में, भुगतान-शेष स्थिति में और अधिक सहजता के लिए किन कारकों ने योगदान दिया है?

.....

.....

.....

.....

.....

13.4 चालू-खाता घाटे का अंतर्राष्ट्रीय तुलनात्मक वर्णन

किसी अर्थव्यवस्था के 'चालू-खाता घाटा' और विकास चरण के बीच संबंध समझना बेहद ज़रूरी है। यह एक सुविदित तथ्य है कि निम्न-आय विकासशील देशों (LDCs) और अल्प-विकसित देशों (UDCs) को पूँजीगत माल आयात करने के लिए धन की आवश्यकता होती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि कोई विकसित देश अधिक आयात नहीं करता है। जैसा कि हमने ऊपर देखा, चालू-खाता घाटा (CAD) किसी देश के बचत अंतर को मापता है, यथा– बचत के मुकाबले निवेश का आधिक्य। यह अंतर शेष जगत से घाटा झेल रहे देश को संसाधनों के निवल हस्तांतरण से पाटा जाता है। इसका अर्थ है कि ऊँचा घाटा (CAD) अपने आप में किसी अर्थव्यवस्था के लिए तब तक अपकारी नहीं होता जब तक कि उसकी ओर पर्याप्त विदेशी धन का प्रवाह होता

रहे। तथापि, किसी भी विकासशील देश में, ऊँचा घाटा (CAD) कभी-कभी एक भयप्रद स्थिति उत्पन्न कर देता है। विकासशील देशों को एक पूरक निवेश की आवश्यकता होती है और यदि यह शेष जगत से किसी बड़े पैमाने पर हुआ तो इसका अर्थ होगा कि देश के लिए अपनी निजी बचत के सहारे ताज़ा निवेशों में पैसा लगाते रहना संभव न होगा। अंततोगत्वा, इसीलिए, यह अपने पूँजी अंतर्वाह को आत्मसात् कर सही दिशा देने हेतु किसी अर्थव्यवस्था की अपनी क्षमता पर ही निर्भर करेगा। यदि संसाधन वितरण इस प्रकार किया जा सकता है कि उससे पुनर्भुगतान (उत्पादन के माध्यम से) की उसकी क्षमता बढ़े, तो ऊँचा CAD GDP अनुपात धारणीय हो सकता है। यदि ऐसा न किया जा सके तो वह किसी भी अर्थव्यवस्था के विकास-मार्ग में अवरोध उत्पन्न करता है। बेहद ऊँचा अनुपात दीर्घावधि में अधारणीय सिद्ध हो सकता है, जैसा कि पूर्व-एशियाई अर्थव्यवस्थाओं में हुआ (1990 के दशकांत में) और उससे किंचित् पूर्व (1994 में) मैक्सिको में। उस सीमा तक, चालू-खाता घाटे का निम्न अनुपात अपने लाभ दर्शाता है। परंतु, बेहद निम्न अनुपात अपने साथ अवसर लागत, यथा– उन संसाधनों से लाभ उठाने में अक्षम होना जिन्हें बाहर से प्राप्त किया जा सकता हो, लेकर आता है। यही कारण है कि हर अर्थव्यवस्था अपना चालू-खाता घाटा नियंत्रित करना चाहती है जिसका अर्थ है – एक स्वस्थ अथवा धारणीय शेष बनाए रखना। इसीलिए, यह ज्ञातव्य है कि ऊँचा घाटा (CAD) आवश्यक रूप से किसी देश के आर्थिक विकास में अवरोध नहीं होता।

13.4.1 चालू-खाता घाटा और विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ

विकासशील देशों में प्रायः प्रौद्योगिकी का अभाव होता है। इस कारण, उन्हें प्रौद्योगिकी एंव यंत्रादि के लिए आयात पर निर्भर रहना पड़ता है, जिस पर उनके भुगतान-शेष का एक अच्छा-ख़ासा भाग खर्च हो जाता है। बड़ी मात्रा में पूँजीगत माल आयात करने के अलावा, अपनी विकास प्रक्रिया को उत्प्रेरित करने के लिए, विकासशील अर्थव्यवस्थाओं को उपभोज्य वस्तुएँ, कच्चा माल एवं कलपुर्ज़े भी आयात करने पड़ते हैं। विकास के आरंभिक चरणों में अनुसंधान एवं विकास (R&D) तथा नवाचार प्रायः धीमा ही रहता है और इस वजह से उन्हें अनेक प्रकार की सेवाएँ भी विकसित अर्थव्यवस्थाओं से ही आयात करनी पड़ती हैं। इस प्रकार के परिदृश्य में, आयात की कुल मात्रा का निर्यात आय से कोई मेल नहीं रहता, यही ऊँचे घाटे (CAD) में परिणत होता है। विगत कुछ दशकों, वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने विकासशील देशों को अपने मानव संसाधनों के निर्यात पर कुछ लाभ पहुँचाया है। इससे विकासशील अर्थव्यवस्थाएँ एक ऋणी अर्थव्यवस्था की अवस्था से निकलकर ऋणदाता अर्थव्यवस्था कहलाने लगीं। दूसरे शब्दों में, वैश्वीकरण ने इस बात में अपना सकारात्मक योगदान दिया है कि केवल निवेश ही नहीं बल्कि तकनीकी जानकारी भी हासिल की जाए। उदाहरण के लिए, चीन ने, अपना आयात नियंत्रित कर और निम्न-लागत विनिर्माणन निर्यात बढ़ाकर, 'चालू खाता अधिशेष' की प्रस्थिति हासिल करने में सफलता प्राप्त की। वर्ष 2017 में, उसका चालू खाता अधिशेष उसके जीडीपी का 1.3 प्रतिशत था, जो कि वर्ष 2016 में 1.8 प्रतिशत से घटकर हुआ था। यह अनुपात वर्ष 2007 में 10 प्रतिशत की ऊँचाई से निरंतर गिरता रहा है। यह रुझान जारी रहा और वर्ष 2018 में वह अपने सकल घरेलू उत्पाद के 0.4 प्रतिशत घाटे (CAD) वाला देश कहलाने लगा। इस श्रेणी में अन्य उदाहरण हैं– ईरान और इराक।

13.4.2 चालू-खाता घाटा और विकसित अर्थव्यवस्थाएँ

विकसित देशों के पास आमतौर पर एक सशक्त विनिर्माणन क्षेत्र होता है। वे विकासशील देशों को प्रौद्योगिकी और मशीनें निर्यात करते हैं। मगर वे भी बड़े (CAD) झेलते हैं। उदाहरण के लिए, वर्ष 2017 में अमेरिका का CAD 2.3 प्रतिशत था, जो कि उसके व्यापक आर्थिक आधार के हिसाब से काफी बड़ा था। चालू-खाता घाटे के इस मान के आस-पास (वर्ष 2017 में) अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाएँ भी रहीं– तुर्की (5.6 प्रतिशत), अर्जेंटीना (4.9 प्रतिशत), यूनाइटेड किंगडम (3.7 प्रतिशत), मिस्र (3.4 प्रतिशत) और ऑस्ट्रेलिया (2.7 प्रतिशत)। विचारात्मक रूप से, 'चालू-खाता अधिशेष' (CSS) CAD का विलोम होता है, जो कि एक ऐसी स्थिति है जहाँ (X – M) का मान धनात्मक होता है (जब कि CAD के लिए ऋणात्मक चिन्ह होता है)। ऐसे कुछ विकसित देशों के उदाहरण जहाँ ऊँचा CSS (वर्ष 2017 में) देखा गया, इस प्रकार हैं– जर्मनी, जापान, चीन, दक्षिण कोरिया, नीदरलैंड, ताइवान, स्विट्ज़रलैंड, सिंगापुर, इटली और थाईलैंड। यह हमारे समक्ष भुगतान-शेष के निपटान खाते संबंधी एक महत्त्वपूर्ण संकल्पना को ले आता है।

13.4.3 निपटान खाता

भुगतान-शेष खाते में घाटा अथवा अधिशेष एक निरंतर-परिवर्तनशील अवस्था दर्शाता है, यथा– यह वर्ष दर वर्ष बदलता रहता है। भुगतान-शेष का समग्र स्वास्थ्य और उसका किसी देश पर प्रभाव, भुगतान-शेष का 'निपटान खाते' से मापा जा सकता है (जिसे 'औपचारिक आरक्षित परिसंपत्ति खाता' भी कहा जाता है)। यह 'निपटान खाता' किसी देश की 'तरल एवं गैर-तरल देयताओं' संबंधी दशा में परिवर्तन को मापता है और तद्नुसार वर्ष के दौरान उस देश की औपचारिक 'आरक्षित परिसंपत्तियों' में परिवर्तन को भी। किसी भी देश की औपचारिक 'आरक्षित परिसंपत्तियों' में शामिल होते हैं – उसका स्वर्ण भंडार, उसकी विनिमय विदेशी मुद्राओं से उपलब्धियाँ और 'विशेष आहरण अधिकार' (SDRs)। यह किसी देश की निवल औपचारिक आरक्षित परिसंपत्तियों में लेन-देन दर्शाता है।

भारत में, विदेशी मुद्रा आरक्षित भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा धारित अथवा नियंत्रित विदेशी परिसम्पत्तियों को इंगित करता है। ये विशेष प्रयोजनार्थ निधियाँ स्वर्ण अथवा किसी विशिष्ट मुद्रा से ही बने होते हैं। ये विदेशी मुद्राओं में नामकृत विशेष आहरण अधिकार एवं पण्य प्रतिभूतियाँ भी हो सकते हैं, जैसे– सरकारी हुण्डियाँ, सरकारी बाँड, निगमित बांड-पत्र तथा साधारण अंशपत्र (इक्विटीज़) एवं विदेशी मुद्रा ऋण। औपचारिक आरक्षित परिसम्पत्तियों के लिहाज से (वर्ष 2018 में), चीन का प्रथम स्थान रहा है, जिसके बाद आते थे– जापान, स्विट्ज़रलैंड, साऊदी अरब, ताइवान, रूस, हाँगकाँग, भारत, दक्षिण कोरिया और ब्राज़ील। इस सूची में देश चूँकि अपनी धारित 'आरक्षित परिसम्पत्तियों' के घटते क्रम में हैं, यह दर्शाता है कि किसी भी वर्ष विशेष हेतु किसी अर्थव्यवस्था का आपेक्षिक स्वास्थ्य उसके 'सुगठित आरक्षित' पर भी निर्भर करता है, न कि अकेले भुगतान-शेष के चालू खाते पर। यह देश की संवृद्धि के परिप्रेक्ष्य में अपने घाटे (CAD) के निधिकरण हेतु पूँजी प्रवाहों को आकर्षित करने के लिए किसी देश की मुद्रा का समुत्थान शक्ति अथवा स्थिरता को उत्तम अवस्था दर्शाता है। दूसरे शब्दों में, उच्च 'आरक्षित परिसम्पत्तियाँ' किसी ऐसे देश के निवेश परिवेश को प्रतिबिंबित करती हैं जिसके वित्त बाज़ारों पर बारंबार संदिग्ध आक्षेपों को खतरा नहीं होता। इस प्रकार के आर्थिक परिवेश में, विदेशी निवेश (खासकर FDI) अर्थव्यवस्था की निर्यात

क्षमताओं को बढ़ाने में योगदान देता है। आगे चलकर, यह घाटे (CAD) को पहले से अधिक धारणीय स्तरों पर ले जाने में मदद करता है।

13.4.4 चालू-खाता शेष को प्रभावित करने वाले कारक

चालू-खाता असंतुलन अनेक कारणों से पैदा होता है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जिंसों की कीमतों का तेज़ी से घटना-बढ़ना एक प्रमुख कारण है। उदाहरण के लिए, पिछले दशक में कच्चे तेल की कीमतों में तेज़ उछाल देखा गया। कच्चे तेल की वैश्विक कीमतों में यह विशिष्ट अभिलक्षण अधिकांश देशों के व्यय प्रतिमान को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। एक अन्य कारक यह है कि कोई भी देश विनिर्माण में विदेशी फर्मों के लिए एक प्रमुख केंद्र के रूप में काम कर सकता है, बेशक उसकी अपनी जनसंख्या के पास उमड़ते निर्यात से अपनी वर्धमान आय को संतुलित करने हेतु यथेष्ट किसी मापदंड पर आयात उपभोग हेतु अर्जन क्षमता का अभाव हो (उदाहरणार्थ, चीन)। यह कारक मुक्त-व्यापार संधियों से और सशक्त हो जाता है। एक तीसरा कारक तब नज़र आता है जब कोई देश अपनी संवृद्धि हेतु निर्यात पर अत्यधिक निर्भरता के कारण दीर्घकालिक घरेलू माँग की गतिहीनता से ग्रस्त हो (जैसे– जापान और ज़र्मनी)। अंततः, चालू-खाता असंतुलन राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्ध्येता के अभाव से भी उत्पन्न हो सकता है। देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय तनाव भी 'व्यापार की शर्तों' (ToT) को प्रभावित करते हैं।

बोध प्रश्न 3 (नीचे दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 षब्दों में लिखें।)

1) ऊँचा घाटा (CAD) होना क्या किसी अर्थव्यवस्था के लिए सदैव एक अवरोध साबित होता है? क्यों?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) चीन का उदाहरण किस प्रकार उच्च/निम्न घाटे (CAD) के सापेक्ष गुणों की व्याख्या करता है? इस प्रसंग के समर्थन में आय कौन-सा आनुभविक साक्ष्य प्रस्तुत कर सकते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) वैश्वीकरण किस प्रकार विशेष रूप से विकासशील देशों के लिए लाभदायक रहा है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) 'निपटान खाते' से आप क्या समझते हैं? यह किस प्रकार महत्त्वपूर्ण होता है?

.....

.....

.....

.....

.....

5) 'चालू-खाता संतुलन' को प्रभावित करने वाले कुछ कारक बताएँ।

.....

.....

.....

.....

.....

13.5 सार-संक्षेप

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार (यथा, देशों के बीच व्यापार) तुलनात्मक लाभ के फायदे लेने के लिए ज़रूरी होता है। जबकि निर्यात और आयात समान रूप से महत्त्वपूर्ण होते हैं, किसी देश का निर्यात उसके कुल आयात की तुलना में उच्चतर स्तर पर रखना आवश्यक होता है। यदि ऐसा किया जा सके तो देश 'चालू-खाता अधिशेष' की स्थिति में आ जाता है; अन्यथा, CAD (अर्थात् चालू-खाता घाटा) की स्थिति में। शेष जगत् के देशों के साथ किसी देश के सभी निर्यात-आयात संबंधी लेन-देनों को क्रमबद्ध रूप से दर्ज़ करने की पद्धति ही भुगतान-शेष खाता कहलाती है। संकेंद्रित नीतियों द्वारा, किसी देश की प्रस्थिति को एक CAD देश से बदलकर एक CSS (चालू-खाता अधिशेष) वाला देश बना देना संभव है। यह ज्ञात होने पर कि यह एक वर्ष-दर-वर्ष परिवर्तनशील प्रस्थिति है, अच्छे-खासे CAD की स्थिति में रहना भी अनिवार्यतः बुरा नहीं होता। आवश्यक यह है कि किसी देश की कर्ज़ अथवा अंतर्राष्ट्रीय भुगतान संबंधी देयताओं के वित्तीयन हेतु वांछित पूँजी प्रवाह हो। इस पृष्ठभूमि में, इस इकाई में, भुगतान-शेष, भुगतान-शेष खाता, भुगतान-शेष घटकों (यथा– चालू खाता, पूँजी खाता एवं आरक्षित परिसम्पत्ति खाता), CAD] CSS एवं निपटान खाता जैसी अनेक महत्त्वपूर्ण संकल्पनाओं पर चर्चा की गई। भारत की तुलना में अनेक देशों के CAD

एवं CSS की तुलनात्मक व्याख्या प्रस्तुत करने के अलावा, इकाई में चालू-खाता असंतुलन' पैदा करने वाले अनेक कारकों को भी इंगित किया गया है।

13.6 शब्दावली

व्यापार की शर्तें : निर्यात और आयात के बीच संबंध। यही किसी देश के निर्यात के प्रति आयात की सापेक्ष कीमत होती है।

विशेष आहरण अधिकार : स्वर्ण का स्थान लेने हेतु सृजित एक साधन। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा खाते की इकाई स्वरूप इन्हीं (SDRs) को प्रयोग किया जाता है। ये कोष के सदस्यों की करेंसी पर निर्बाध रूप प्रयोग हो सकने वाले दावे हैं।

चालू-खाता घाटा : यह ऐसे किसी देश के व्यापार को मापने का मापदंड होता है, जहाँ आयातित माल एवं सेवाओं का मान उसकी निर्यात की गई वस्तुओं एवं सेवाओं के मान से अधिक हो। चालू खाते में निवल आय (जैसे– ब्याज़ और लाभांश) तथा हस्तांतरण (जैसे– विदेशी मदद) शामिल होते हैं, हालाँकि ये घटक कुल चालू खाते की एक लघु अंश मात्र का हिसाब देते हैं।

13.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) Basu, Kaushik (ed.) (2008). The Oxford Companion to Economics in India, OUP, New Delhi.

2) Basu, Kaushik and Annemie Maertens (eds.) (2011). The New Oxford Companion to Economics in India, OUP, New Delhi.

3) Ratha, D, S Mohapatra and Z Xu (2008). Outlook for Remittances 2008-10, Development Prospects Group, Migration and Remittances Team, World Bank.

4) Suparna Karmakar, Rajiv Kumar and Bibek Debroy (eds.) (2008). India's Liberalisation Experience, Sage, New Delhi.

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) यह किसी देश के अन्य देशों के साथ निर्यात एवं आयात विषयक सभी लेन-देशों का एक क्रमबद्ध लेखा-जोखा होता है।

2) परिमाण, सम्मिश्रण एवं लक्ष्य। परिमाण 'मूल्य के रूप' में मापा जाता है और अंतर्राष्ट्रीय लेन-देनों का आकार इंगित करता है। सम्मिश्रण का अर्थ होता है – निर्यात एवं आयात में संलिप्त जिंस अथवा क्षेत्र। लक्ष्य विश्व के अन्य देशों के साथ आर्थिक अनुबद्धताएँ इंगित करता है। इसमें किसी देश के निर्यात गंतव्य एवं उसके आयात के स्रोत शामिल होते हैं।

3) भुगतान-शेष एक लेखा वक्तव्य होता है जो देश के नागरिकों एवं शेष जगत के बीच निर्यात एवं आयात संबंधी खाते की सही स्थिति दर्शाता है। किसी देश की विदेशी मुद्रा आरक्षित कोष की स्थिति जानना उपयोगी सिद्ध होता है। यह सरकार के लिए अपनी मौद्रिक एवं राजकोषीय नीति निरूपित करने के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। यह किसी अर्थव्यवस्था के स्वास्थ्य के संसूचक के रूप में भी उपयोगी सिद्ध होता है।

4) भुगतान-शेष के तीन प्रमुख 'खाता-शीर्षक' हैं– चालू खाता, पूँजी खाता और आरक्षित परिसम्पत्ति खाता। चालू खाते के दो उप-शीर्षक हैं– BoT और BoS अर्थात् 'व्यापार-शेष' और 'सेवा-शेष'। BoT और BoS क्रमशः 'वस्तुओं' एवं 'सेवाओं' के निर्यात एवं आयात का लेखा प्रग्रहण करते हैं। 'भुगतान-शेष का चालू खाता' = BoT + BoS.

5) चालू खाता घाटा (CAD) का अर्थ है– कुल निर्यात एवं कुल आयात के बीच अंतर। 'घाटा' शब्द का अर्थ होता है कि व्यापार उल्टा चल रहा है अर्थात् निर्यात आयात से अधिक होने की बजाय आयात निर्यात से अधिक हो रहा है। यह अंतर या घाटा एक 'ऋणात्मक' चिन्ह से व्यक्त किया जाता है जिसे ऋणादान अथवा कर्ज़ द्वारा संतुलित किया जाना ज़रूरी होता है। बढ़ते CAD का अर्थ होगा – एक उच्चतर ऋणात्मक मान और अपेक्षाकृत अधिक ऋणादान पाने की आवश्यकता।

बोध प्रश्न 2

1) पूँजी खाते का उदारीकरण किसी भी अर्थव्यवस्था को विनिमय दरों में बड़े-बड़े में उतार-चढ़ावों के प्रति सुप्रभाव्य बना देता है। अंतर्राष्ट्रीय बाज़ारों में व्यापक सट्टेबाजी पूँजी के अतीव अंतर्वाह एवं बहिर्वाह को प्रेरित कर सकती है, जिससे पूंजी खाते में अस्थिरता उत्पन्न होगी। अतएव, प्रथम 'चालू खाता' उदारीकृत करना और फिर क्रमिक रूप से 'पूँजी खाता विनिमेयता' अपनाना समझादारी होगा। पूर्ण विनिमेयता का अर्थ है – भुगतान-शेष के 'चालू' और 'पूँजी' दोनों खातों पर पूरी विनिमेयता।

2) वर्ष 1996 में। भारी व्यापार घाटों, ऋण देयताओं एवं आरक्षित विदेशी मुद्राकोष में तेज़ गिरावट ने इस ओर अग्रसर किया।

3) अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार में कच्चे तेल की कीमतों में क्रमिक वृद्धि, जिसके परिणामस्वरूप वर्ष 1973 के पश्चात् कुल आयात बिल में तेज़ उछाल आया; वर्ष 1980–83 की अंतर्राष्ट्रीय महामंदी; अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष के पुनर्भुगतान; '1980 के दशकांत में तेल की कीमतों में फिर तेज़ उछाल, जिसके बाद खाड़ी युद्ध हुआ; सोवियत संघ का विघटन, जिसके परिणामस्वरूप उन नवोदित देशों को निर्यात घट गया; आदि।

4) व्यापार नीति में परिवर्तन, रुपये का अवमूल्यन, रुपये की विनिमेयता, शुल्क-दरों में कमी, आयात उदारीकरण, रुपये की आंशिक विनिमेयता, आदि।

5) निर्यात में वृद्धि, कच्चे तेल की अंतर्राष्ट्रीय कीमतों में गिरावट तथा गैर-तेल आयात की वृद्धि में मंदी। वर्ष 1995–96 में, CAD भारत के GDP का 1.7

प्रतिशत रहा। वर्ष 2000–01 तक CAD और घटकर GDP का मात्र 0.5 प्रतिशत रह गया।

6) वर्ष 2002–03 से सकल प्राप्तियों एवं भुगतानों में महत्त्वपूर्ण वृद्धि के कारण भारत के 'अदृश्य खाते' में तेज़ उछाल; सेवा निर्यात में प्रबल वृद्धि, ख़ासकर सॉफ्टवेयर एवं सूचना प्रौद्योगिकी (IT) संबंधी सेवाओं में; तथा समुद्र पार से प्रेषित राशियाँ।

बोध प्रश्न 3

1) नहीं। अर्थव्यवस्थाएँ पूँजी अंतर्वाहों की सेवाएँ कायम रखने में सक्षम हो सकती हैं, बशर्ते वित्तीय अंतर्वाहों को लाभ के साथ दिशा प्रदान की जाए। यदि आर्थिक परिवेश लाभप्रद रूप से नियंत्रित किया जाए तो ऐसे अंतर्वाहों से किए गए निवेश घरेलू आय उत्पन्न करते हैं, जो अर्थव्यवस्था को अपने वित्त अंतर्वाह का लाभ लेने में मदद करता है।

2) चीन का उदाहरण अपने आप में अनोखा है, जहाँ CAD के एक बहुत ऊँचे स्तर की प्रस्थिति से उबरकर वह हाल के वर्षों में CSS वाले देशों की कतार में आ खड़ा हुआ है। ऐसा उसने नियंत्रित आयात और अपने 'निम्न कौशल विनिर्मित वस्तुओं' के निर्यात में नियमित वृद्धि करके किया। आनुभविक पदों में, उसने वर्ष 2007–18 की अवधि में अपना घाटा (CAD) लगभग 10 प्रतिशत के स्तर से क्रमिक रूप से –0.4 प्रतिशत पर लाकर किया है।

3) वैश्वीकरण प्रभावी रूप से किसी पूँजी प्रचुर देश से निवेश को किसी पूँजी-अभाव वाले (परंतु संभवतः आर्थिक रूप से धनी) देशों की ओर अंतरित कर देता है। विकासशील देश सस्ते अकुशल श्रमिकों, अच्छे कुशल कार्य-बल, विशिष्ट प्रकार के कच्चा माल एवं प्राकृतिक संसाधनों के लिहाज से विशिष्टतापूर्वक धनी होते हैं। वहाँ अपने अन्यथा प्रचुर मानव एवं सामग्री संसाधनों को काम में लेने हेतु आवश्यक प्रौद्योगिकी (जो कि विपुल निवेश से ही प्राप्त होती है) का ही से अभाव होता है। इस दृष्टिकोण से देखें जाने पर, विगत 3–4 दशकों में अनेक विकासशील देशों का अनुभव वैश्वीकरण के लाभकारी पहलुओं को सिद्ध करता है।

4) जबकि वास्तविक CAD, यथा (X – M), धनात्मक अथवा ऋणात्मक हो सकता है (घाटा यदि ऋणात्मक और अधिशेष यदि यह धनात्मक हुआ), अर्थव्यवस्था पर इसका यथार्थ प्रभाव देश के 'निपटान खाते' से तय किया जाता है। यह 'निपटान खाता' किसी देश की 'तरल एवं गैर-तरल देयताओं' की स्थिति में परिवर्तन का मापदंड होता है। तद्नुसार, जबकि (X – M) केवल तरल परिसंपत्तियों को लेता है, 'निपटान खाते' में गैर-तरल परिसंपत्तियों का मान शामिल होता है, जैसे– स्वर्ण भंडार, विनिमेय विदेशी मुद्राओं से उपलब्धियों तथा 'विशेष आहरण अधिकार' (SDRs)। किसी विशिष्ट वर्ष के लिए, किसी अर्थव्यवस्था का सापेक्षिक स्वास्थ्य उसके 'सुगठित आरक्षित कोष' पर भी निर्भर करता है, न कि सिर्फ भुगतान-शेष के चालू खाते। 'निपटान खाते' का महत्त्व इस तथ्य से इंगित होता है कि यह अपने CAD के निधिकरण हेतु पूँजी अंतर्वाह आकर्षित करने के लिए किसी देश की मुद्रा की समुत्थान शक्ति (अथवा स्थिरता) को प्रतिबिंबित करता है (जहाँ देश की संवृद्धि संभावनाएँ उच्च मानी जाती हों)।

5) अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर तेज़ी से जिंसों की कीमतों में उतार-चढ़ाव; आयात उपभोग हेतु आवश्यक क्रय-शक्ति के अभाव से ग्रस्त किसी देश की घरेलू जनसंख्या का बड़ा भाग (एक ऐसे पैमाने पर जो उमड़ते निर्यात से उसकी बढ़ती आय को संतुलित करने हेतु पर्याप्त हो – वह कारक जो मुक्त व्यवहार के साथ सशक्त होता जाता है); घरेलू माँग गतिहीनता (संवृद्धि हेतु निर्यात पर अत्यधिक निर्भरता के कारण); राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर प्रतिस्पर्ध्येता की कमी; तथा देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय तनाव।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 14 शासन व संस्थाओं की भूमिका : तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में भारत*

संरचना

14.0 उद्देश्य

14.1 विषय प्रवेश

14.2 सरकार और शासन

- 14.2.1 सरकार के प्रकार
- 14.2.2 सरकार और विकास
- 14.2.3 शासन
- 14.2.4 सुशासन

14.3 शासन के संघटक

- 14.3.1 आर्थिक शासन
- 14.3.2 शासनार्थ संस्थाएँ

14.4 शासन सूचकांक

14.5 सार-संक्षेप

14.6 शब्दावली

14.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें/संदर्भ ग्रंथादि

14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

14.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद, आप इस योग्य होंगे कि :

- सरकार के सामान्य प्रकारों के अभिलक्षण बता सकें;
- सरकार और शासन के बीच अंतर स्पष्ट कर सकें;
- सरकार के प्रकार और विकास के बीच संबंध निरूपित कर सकें;
- 'शासन' और 'सुशासन' के बीच अंतर स्पष्ट कर सकें;
- शासन के आर्थिक एवं संस्थागत महत्त्व के बीच अंतर प्रकट करते हुए उसके दो महत्त्वपूर्ण घटकों पर प्रकाश डाल सकें;
- विकास हेतु अपनी समीक्षा के साथ महत्त्वपूर्ण शासन सूचकांकों पर चर्चा कर सकें, और
- अपनी पड़ोसी अर्थव्यवस्थाओं की शासन संस्थाओं के साथ भारत की शासन संस्थाओं की गुणवत्ता के लिहाज से उसकी तुलनात्मक स्थिति का संक्षिप्त वर्णन कर सकें।

* प्रो. डी.एन. रेड्डी, उस्मानिया विश्वविद्यालय

14.1 विषय प्रवेश

विकास अध्ययनों में शासन और संस्थाओं की अवधारणा का प्रयोग अपेक्षाकृत नई घटना है। अतः, शासन अथवा संस्थाओं की अभी तक कोई सर्वजनीन रूप से स्वीकृत परिभाषा सामने नहीं आई है। इस तथ्य के आलोक में, इस विषय पर लेख, पुस्तकें आदि विश्व बैंक और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) जैसे बहुपक्षीय संगठनों के कुछ शोध अध्ययनों एवं रिपोर्टों तक ही सीमित हैं।

द्वितीय विश्वयुद्ध के तत्काल पश्चात् की अवधि में 'विकास अर्थशास्त्र' के विकास-काल से ही बहस के प्रमुख मुद्दों में विकास में 'राज्य' की भूमिका रही है। यह विकास में 'बाज़ार' की भूमिका से नितांत भिन्न होती है जो कि मुख्यधारा के अर्थशास्त्र में देखी जाती है। 'शीत युद्ध' की अवधि में, 'समाजवादी' और 'पूँजीवादी' प्रखण्डों के बीच राजनीतिक मतभेद देखने में आया। विकास पर बहस ने तब 'राज्य बनाम बाज़ार' के रूप में एक सैद्धांतिक अंतर्धारा का रूप धारण कर लिया था। 1960 के दशक में, जापान और दक्षिण कोरिया में संवृद्धि में त्वरित प्रगति राज्य की पहलकदमियों से प्रेरित मानी गई। ये राज्य 'विकासात्मक राज्य' माने जाने लगे थे। आगे चलकर 'विकासात्मक राज्य' के मुख्य अभिलक्षण हाँगकाँग, सिंगापुर और ताइवान जैसी अन्य पूर्व एवं दक्षिण-पूर्व एशियाई अर्थव्यवस्थाओं पर भी लागू किए गए। भारत जैसे अन्य देश भी थे जहाँ राज्य एक महती भूमिका निभाता तो था परंतु बेहद निम्न संवृद्धि दरों के साथ। 1980 के दशक का अंत होते-होते, सोवियत संघ के विघटन और शीत युद्ध की समाप्ति के साथ ही, भारत जैसी राज्य-निर्देशित अर्थव्यवस्थाओं में धीमी संवृद्धि का 'श्रेय' 'राज्य विफलता' को दिया जाने लगा। इससे विकास पर बहस का रुख़ बाज़ार-प्रेरित संवृद्धि को सरल बनाने हेतु 'सुशासन' की ओर हो गया। 1990 के दशक के पूर्वार्ध में, पश्चिमी सरकारों और सहायता संस्थानों ने 'शासन' को आर्थिक मदद प्रदान करने के लिए एक बड़ा शर्त बना दिया। इसके साथ ही, विकास में 'शासन संबंधी मुद्दों एवं संस्थाओं' पर शोध की दिशा में एक सुस्पष्ट रुझान देखा गया और अधिक हाल में, संयुक्त राष्ट्र की एस्केप (UNESCAP) रिपोर्ट (2017) में देखा गया कि– 'शासन की गुणवत्ता और सार्वजनिक संस्थाओं की प्रभावोत्पादकता वे निर्णायक कारक हैं जो विकास प्रक्रिया में योगदान देते हैं।'

14.2 सरकार और शासन

अपने शाब्दिक अर्थ में, 'सरकार' और 'शासन' दोनों शब्द पर्याय स्वरूप प्रयोग किए जाते हैं। परंतु अपने सांस्थानिक आयाम में 'शासन' शब्द के बढ़ते प्रयोग के साथ, सरकार को उसके राजनीतिक दृष्टिकोण से भिन्न माना जाता है और उस रीति के लिहाज से देखा जाता है जिससे प्राधिकार (यथा, वैध सत्ता) प्रयोग किया जाता है। जहाँ सत्ता अन्य लोगों के क्रियाकलाप को प्रभावित करने की क्षमता का नाम है, वहीं प्राधिकार ऐसा करने का अधिकार है। अतएव, सरकार किसी देश में वैध सत्ता प्रयोग करने हेतु एक प्राधिकरण होती है। 'सरकार' और 'राज्य ' शब्द भी प्रायः पर्याय के रूप में प्रयोग किए जाते हैं।

14.2.1 सरकार के प्रकार

सरकारों को मोटे तौर पर तीन प्रकार से वर्गीकृत किया जाता है; यथा राजतंत्र, अधिनायकत्व और लोकतंत्र। राजतंत्र किसी देश पर शासन करने हेतु वैध सत्ता का

प्रयोग करने के लिए किसी राज्य अथवा शासक द्वारा प्राधिकार के उत्तराधिकार का परंपरागत रूप है। यह आज के युग में एक दुर्लभ अपवाद है। अतः, अधिनायकत्व और लोकतंत्र, अपनी विभिन्न छटाओं के साथ, वर्तमान में तमाम देशों में सरकार के दो व्यापकतः प्रचलित रूप हैं।

अधिकनायकत्व अर्थात् तानाशाही एक ऐसी व्यवस्था के रूप में परिभाषित सत्तावादी शासन-प्रणाली हाता है जिसमें सत्ता का संकेंद्रण कुछ ही हाथों में रहता है। अपने निकृष्टतम रूप में, कोई एकल व्यक्ति-केंद्रित अधिनायकत्व होता है। ऐसी रणनीतियों में जो अधिनायक सत्ता में बने रहने के लिए अपनाते हैं, शामिल होते हैं– बल-प्रयोग, नागरिक स्वतंत्रताओं का लिंबन एवं लोगों को आवाज़ उठाने अथवा आज़ादी प्रयोग करने पर पाबंदी, स्वयं-नियंत्रित संवैधानिक प्रक्रिया, संरक्षण या स्वमत-प्रचार (जो कि फ़ासीवादी प्रवृत्तियाँ ही हैं), आदि। अधिकांश अधिनायकत्व या तो सेना-समर्थित होते हैं अथवा निलंबित जन-प्रतिनिधित्व अधिकारों वाली प्रत्यक्ष सैन्य शासन-व्यवस्थाएँ होते हैं।

लोकतंत्र प्रतिनिधि सरकारों के माध्यम से लोगों को वैध सत्ता हस्तांतरण से निर्दिष्ट सरकार का रूप होता है। लोकतांत्रिक शासन को वैध सत्ता के हस्तांतरण का एक लंबा इतिहास है और इसे तीन 'लोकतंत्र की तरंगों' के रूप में इंगित किया जाता है। प्रथम तरंग रही – 'राजतंत्र द्वारा संसद, स्वतंत्र चुनाव एवं भाषण की स्वतंत्रता' को और अधिक शक्ति प्रदान किए जाने के साथ इंग्लैंड में 'वर्ष 1688 की गौरवपूर्ण क्रांति।' लोकतंत्र की 'द्वितीय तरंग' जो कि राजतंत्र से लोकतंत्र की ओर कदम बढ़ाना सिद्ध हुई, 'स्वतंत्रता, समानता एवं भ्रातृत्व' पर ज़ोर दिए जाने के साथ 'वर्ष 1789 की फ्रांसीसी क्रांति– के रूप में देखी गई। हालाँकि यहाँ कुछ वैचारिक पूर्वाग्रह देखा गया, 1980 के दशकांत में सोवियत संघ का विघटन और दक्षिणी यूरोप में समाजवादी शासन-व्यवस्थाओं का पतन 'लोकतंत्र की तीसरी तरंग' दर्शाते नज़र आए। इस तीसरी तरंग ने न सिर्फ 'सत्तावादी शासन प्रणालियों से लोकतंत्रों की ओर गमन दर्शाया बल्कि 'राज्य-प्रेरित अर्थव्यवस्थाओं' से 'बाज़ार सुविधादायी राज्यों' की ओर जाना भी इंगित किया। यह लोकतांत्रिक राज्य की एक सुविधादायी राज्य के रूप में अवधारणा ही थी जो 'शासन' को विकास संबंधी बहस के केंद्र में ले आई। यद्यपि आज यह धारणा व्यापक है कि लोकतंत्र ही तमाम देशों में सरकार का प्रमुख रूप है, वास्तविकता कुछ और ही है।

एक पेचीदा प्रयास के माध्यम से 'दि इकनॉमिस्ट' की 'इंटेलिजेंस यूनिट' वर्ष 2006 से ही 160 से भी अधिक देशों का एक 'डेमोक्रेसी इंडैक्स' अर्थात् 'लोकतंत्र सूचकांक' प्रकाशित करती आई है। यह पाँच सूचकांकों की श्रेणियों पर आधारित होता है; यथा – (i) चुनाव प्रक्रिया एवं बहुलवाद, (ii) सरकार की प्रकार्यात्मकता, (iii) राजनीतिक भागीदारी, (iv) राजनीतिक संस्कृति, तथा (v) नागरिक स्वतंत्रताएँ। इन श्रेणियों के अंतर्गत सूचकों की एक शृंखला में अपने समंकों के आधार पर प्रत्येक देश को सरकार के चार प्रकारों में से किसी एक में वर्गीकृत किया जाता है; यथा – पूर्ण लोकतंत्र, कुंठित लोकतंत्र, संकर शासन-व्यवस्था एवं सत्तावादी शासन-व्यवस्था। वर्ष 2019 का नवीनतम लोकतंत्र सूचकांक दर्शाता है कि केवल 22 देश (विश्व जनसंख्या के मात्र 6 प्रतिशत के आस-पास का ही प्रतिनिधित्व करते हुए) 'पूर्ण लोकतंत्र' हैं। लगभग 54 देश (विश्व जनसंख्या के अन्य 36 प्रतिशत) 'सत्तावादी शासन-व्यवस्थाएँ' हैं। लोकतंत्र सूचकांक उपर्युक्त पाँचों सूचकों के लिहाज से आकलित एवं संश्लिष्ट सूचकांक होता है और इसे शून्य से दस के पैमाने पर दर्शाया जाता है, जहाँ 8 से अधिक अंक पाने

वाले किसी भी देश को पूर्ण लोकतंत्र का दर्ज़ा दिया जाता है। अपने 6.9 समंक के साथ और कुल 167 देशों में 51वें स्थान पर रहकर, भारत 'कुंठित लोकतंत्रों' की श्रेणी में आता है। यह श्रेणी दर्शाती है कि ये देश अनेक लोकतांत्रिक अभावों से ग्रस्त हैं। तालिका 14.1 इस संबंध में भारत की तुलना में छह पड़ोसी दक्षिण-एशियाई देशों की यथास्थिति प्रस्तुत करती है। विश्व में उनकी अवस्थिति इस प्रकार है– भारत (51), श्रीलंका (69), बांग्लादेश (80), नेपाल (92), पाकिस्तान (108) और चीन (153)। विशेष रूप से, चीन एक 'सत्तावादी शासन-व्यवस्था' के रूप में सामने आता है। इसके विपरीत नार्वे (1) और स्वीडन (3) जैसे स्कैंडीनेवियन देश 'पूर्ण लोकतंत्रों' के रूप में लगभग संपूर्णता के साथ शीर्ष पर बने हुए हैं।

तालिका 14.1 : लोकतंत्र सूचकांक 2019

देश	चुनाव प्रक्रिया एवं महाधिक्यवाद	सरकार की प्रकार्यात्मकता	राजनीतिक भागीदारी	राजनीतिक संस्कृति	नागरिक स्वतंत्रताएँ	कुल समंक	श्रेणी
भारत	8.7	6.8	6.7	5.6	6.8	6.9	51
बांग्लादेश	7.8	6.1	6.1	4.4	5.0	5.9	80
नेपाल	4.8	5.4	5.0	5.6	5.6	5.3	92
पाकिस्तान	6.1	5.7	2.2	2.5	4.7	4.3	108
श्रीलंका	7.0	6.1	5.6	6.3	6.5	6.3	69
चीन	0.0	4.3	3.3	2.5	1.2	2.3	153
नार्वे	10.0	9.6	10.0	10.0	9.7	9.9	1
स्वीडन	9.6	9.6	8.3	10.0	9.4	9.4	3

नोट : समंक : 8 से 10 = पूर्ण लोकतंत्र, 6 से 8 = सदोष लोकतंत्र, 4 से 6 = संकट, 0 से 4 = सत्तावादी

स्रोत : दि इकॉनोमिस्ट इंटेलीजेंस यूनिट, 2020

14.2.2 सरकार और विकास

क्या किसी विशेष प्रकार की सरकार से विकास में कुछ अंतर आता है? इसका उत्तर है – 'हाँ'। निम्नलिखित कारणों से अधिनायकवाद में आर्थिक संवृद्धि के उप-इष्टतम रहने की प्रत्याशा होती है – प्रथम, अपनी भूमिकाओं के रक्षार्थ, तानाशाह जनता से जबरन वसूले गए राजस्व का अधिकांश भाग स्वास्थ्य, शिक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा जैसे सामाजिक विकास को कम तरज़ीह देते हुए सेना, पुलिस एवं खुफिया विभाग पर खर्च करते हैं। दूसरे, स्वामित्व हरण का भय निवेशिकों, नए प्रवेशकों एवं नव प्रवर्तकों को निवेश करने से रोकता है। तीसरे, सत्तावादी शासन-व्यवस्थाएँ अमीरों की मदद पर अपनी निर्भरता के कारण असमानताएँ कायम रखती हैं और गरीबों को खतरनाक मानती हैं। सत्तावादी शासन-व्यवस्थाओं की अधिकांश रणनीतियाँ सामाजिक रूप से अवांछनीय होती है। इस बात के मद्देनज़र, 20वीं सदी के अनेक वर्षों को अधिकांश सत्तावादी शासन-व्यवस्थाओं ने स्वयं के विरुद्ध सशक्त एवं सतत् जन-संघटन के फलस्वरूप में लोकतांत्रिक परिवर्तन के लिए स्थान रिक्त कर दिया है। फिर भी, वर्ष 2019 तक 54 देश ऐसे रहे जो दुनिया भर में 'सत्तावादी शासन-व्यवस्थाओं' की श्रेणी में रखे जा सकते हैं।

अधिनायकवाद के विपरीत, लोकतंत्र एक प्रतिनिधि सरकार के रूप में शासित वर्ग को शक्ति प्रदान करता है। लोकतांत्रिक संस्थाएँ, जैसे (i) चुनी हुई विधायिका, (ii) स्वतंत्र न्यायपालिका, एवं (iii) कानून, वैयक्तिक अधिकारों व स्वतंत्रता का सम्मान, उद्यम एवं नवाचार को प्रोत्साहित करती हैं। कोई अर्थव्यवस्था निवेश और दीर्घावधि लेन-देन से पूरा-पूरा लाभ उठाने में तभी सक्षम होगी जब उसके यहाँ ऐसी सरकार हो जो विश्वसनीय रूप से चलने में समर्थ (यथा, टिकाऊ) होने के साथ-साथ वैयक्तिक अधिकारों के उल्लंघन को निषिद्ध करने वाली भी हो। तद्नुसार, अधिकतम आर्थिक विकास हेतु वैयक्तिक अधिकार देने के लिए आवश्यक दशाएँ ठीक वही हैं जो किसी स्थायी या टिकाऊ लोकतंत्र कायम करने के लिए होती हैं। कुछ स्थितियों में यह आलोचना की जाती है कि लोकतंत्र पुनर्वितरणीय माँगों को जन्म देता है जो निवेश की वरीयता को कमज़ोर कर संवृद्धि को प्रभावित करती हैं। बहरहाल, यह आलोचना ज्यादा वज़न नहीं रखती क्योंकि अनेक लोकतांत्रिक देशों में (भारत समेत) संवृद्धि दरें अनेक सत्तावादी देशों के मुकाबले कहीं अधिक हैं। जैसा कि अमर्त्यसेन (1999) कहते हैं, लोकतंत्र भारत जैसे वृहद् जटिल समाजों के शासनार्थ दो कारणों से महत्त्वपूर्ण है; यथा – (i) लोकतंत्र बहुलवाद का संरक्षण एवं प्रबंधन प्रदान करता है (जिससे विषमजातीय एवं विविध समाजों में सामाजिक आधार मज़बूत होता है) जो कि बदले में, विविध उद्यमों का पोषण करता है, तथा (ii) लोकतंत्र बेहतर जीवन स्तर हेतु माँग का समर्थन करता है जो कि 'संवृद्धि के लाभों' के न्यायपूर्ण विभाजन को प्रोत्साहित करता है।

उपर्युक्त के आलोक में, लोकतंत्र के लिए अधिकाधिक देशों में बढ़ती प्रतिबद्धता देखी जा रही है। इसके साथ ही, 'लोकतंत्र के घाटों' से उबरने के लिए शासन पर उत्तरोत्तर आग्रह किया जा रहा है। आइए, इसीलिए, 'शासन' शब्द का कुछ विस्तार से विश्लेषण करते हैं।

14.2.3 शासन

'शासन' शब्द का अर्थ 'सरकार' शब्द से भिन्न है। 'शासन' शब्द का उदय आर्थिक विकास के उन राज्य अभिभावी प्रतिमानों से वितृष्णा से हुआ माना जा सकता है जो 1950 से लेकर 1970 के दशक तक चलन रहे थे। 'शासन' शब्द में राज्य व उसकी परिधि के बाहर की संस्थाएँ सम्मिलित हैं। इस संदर्भ में, 'नव-सांस्थानिक दृष्टिकोण' 'राज्येतर संस्थाओं' पर विशेष ज़ोर देता है। 'शासन' शब्द को विभिन्न संगठनों द्वारा भिन्न-भिन्न तरीकों से परिभाषित किया गया है हम यहाँ दो व्यापक परिभाषाओं पर चर्चा करेंगे, जिनमें एक विश्व बैंक द्वारा दी गई है ओर दूसरी संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) द्वारा।

विश्व बैंक (1994) : विश्व बैंक 'शासन' को उस पद्धति से परिभाषित करता है जिसमें किसी देश के आर्थिक एवं सामाजिक संसाधनों के प्रबंधन में सत्ता प्रयोग किया जाता है। शासन के तीन सुस्पष्ट पहलू दिखाई पड़ते हैं; यथा – (i) राजनीतिक शासन-प्रणाली का रूप; (ii) वह प्रक्रिया जिससे किसी देश के विकासार्थ आर्थिक एवं सामाजिक संसाधनों के प्रबंधन में प्राधिकार का प्रयोग किया जाता है; तथा (iii) नीतियों के अभिकल्पन, निरूपण एवं क्रियान्वयन के साथ-साथ प्रकार्यों के निर्वहन हेतु सरकार की क्षमता।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (1997) : यह संगठन (UNDP) को सभी स्तरों पर किसी देश के कार्यों-प्रकार्यों को नियंत्रित करने हेतु आर्थिक, राजनीतिक एवं

प्रशासनिक प्राधिकार के प्रयोग के रूप में परिभाषित करता है। इसमें वे सभी कार्यतंत्र, प्रक्रियाएँ एवं संस्थाएँ शामिल होती हैं जिनके माध्यम से नागरिक व जन समूह अपने हित व्यक्त करते हैं, अपने कानूनी अधिकारों का प्रयोग करते हैं, अपने दायित्व निभाते हैं और उनके विवाद सुलझाते हैं।

ये परिभाषाएँ ऐसी हैं, ख़ासकर दूसरी (UNDP वाली), जो शासन संबंधी सभी बहसों और विश्लेषणों पर अभिभावी रहती हैं। यह स्पष्ट है कि शासन का अर्थ सरकार की अपेक्षा कहीं बड़ा दायरा है। प्रथम, ये परिभाषाएँ शासन की विभिन्न इकाइयों का प्रग्रहण करती हैं जो कि राज्य अथवा सरकार के साधन मात्र नहीं होतीं। दूसरे, ये दर्शाती हैं कि शासन राज्य व नागरिक समाज की अंतर्क्रियाओं में भी अंतर्निहित होता है और उनके साथ अंतर्ग्रथित भी। अतः, शासन जन क्षेत्र का वह भाग है जिसमें सरकार और नागरिक समाज दोनों समाहित होते हैं। तीसरे, दोनों ही परिभाषाओं में 'लोकतांत्रिक उत्तरदेयता' के अव्यक्त संदर्भ के साथ राजनीतिक आयाम शामिल हैं। अन्य शब्दों में, इनका सरोकार न सिर्फ इस बात से है कि सत्ता किस प्रकार प्रयोग की जाए, बल्कि इस बात से भी है कि सत्ता कैसे हासिल की जाए। इस रूप में ये परिभाषाएँ, फुकुयामा (2013) की 'अराजनीतिक परिभाषा' के विपरीत है जिसके अनुसार, शासन निश्चय ही 'इस बात पर ध्यान दिए बिना कि सरकार लोकतांत्रिक है अथवा नहीं, कानून बनाने व लागू करने एवं सेवाएँ प्रदान करने हेतु किसी सरकार की क्षमता' से संबंध रखता है।

14.2.4 सुशासन

सुशासन अर्थात् उत्तम शासन एक महत्त्वाकांक्षापूर्ण आयाम है। यह ऊपर उल्लिखित व्यापक परिभाषाओं की तुलना में एक सीमित कार्यक्षेत्र दर्शाता है। सुशासन अन्य गुणधारकों के साथ-साथ 'सहभागितापूर्ण, पारदर्शी और उत्तरदायी' भी होता है। यह, इसीलिए, 'कानून का शासन' प्रोत्साहित करने में प्रभावी और न्यायोचित सिद्ध होता है। अतएव, सुशासन ऐसा शासन है जो उस समाज में किसी व्यापक सहमति के आधार पर 'राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्राथमिकताएँ' सुनिश्चित करे जहाँ विकास संसाधनों के आवंटन पर निर्णयन में दरिद्रतम और सर्वाधिक असुरक्षित व्यक्ति की आवाज़ भी सुनी जाए। विश्व बैंक के अनुसार, विश्वभर में नीति-निर्माता, नागरिक समाज समूह, मददादाता एवं विद्वत्जन उत्तरोत्तर इस बात से सहमत हो रहे हैं कि सुशासन विकास के लिए महत्त्वपूर्ण होता है। यह वर्धमान सहमति सांस्थानिक गुणवत्ता के आनुभाविक उपायों के प्रचुरोद्भवन, निवेश वातावरण और विकास पर सुशासन के सशक्त प्रभाव दर्शाते अनुषंगी अनुसंधान से जन्मी है।

बोध प्रश्न 1 (दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।)

1) सरकार और शासन के बीच अंतर स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) समग्र 'लोकतंत्र सूचकांक' के पदों में, अपने पड़ोसी देशों की तुलना में भारत की स्थिति क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) लोकतंत्र की आलोचना किन शब्दों में की जाती है? क्या आप मानते हैं कि यह आलोचना उचित है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) 'शासन' शब्द के अनिवार्य संघटक कौन-कौन-से हैं? संक्षिप्त व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

5) 'सुशासन' किस प्रकार 'शासन' से भिन्न होता है?

.....

.....

.....

.....

.....

14.3 शासन के संघटक

शासन की भूमिका संबंधी विश्लेषण में, शासन के दो महत्त्वपूर्ण संघटकों का ज़िक्र आता है; यथा– 'आर्थिक शासन' और 'शासनार्थ संस्थाएँ'। वृहत्तर शासन विश्लेषण के लिए ये दोनों आवश्यक होते हैं। इसीलिए, इन्हें शासन के उप-समुच्चयों के रूप में देखा जा सकता है। आइए, देखें।

14.3.1 आर्थिक शासन

'आर्थिक शासन' बाज़ारों की प्रकार्यात्मकता और आर्थिक गतिविधि से संबंध रखता है। यह आर्थिक गतिविधियों एवं लेन-देन में मदद करने के लिए विधि सम्मत एवं

सामाजिक संस्थाओं के प्राधार एवं प्रकार्यात्मकता की ओर इशारा करता है। अविनाश दीक्षित (2009) यह बताने के लिए अर्थव्यवस्था के संदर्भ में 'सुशासन' शब्द का प्रयोग करते हैं कि किसी भी सुचारू रूप से काम कर रही बाज़ार अर्थव्यवस्था के लिए तीन अनिवार्य पूर्व-शर्तें सुनिश्चित करने के लिए 'सुशासन' आवश्यक होता है। प्रथम, संपदा अधिकारों की सुरक्षा, जिसके बिना लोगों में बचत एवं निवेश करने हेतु प्रोत्साहन का अभाव पाया जाएगा। दूसरे, संविदाओं का प्रवर्तन, जो कि यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक होता है कि आर्थिक लेन-देन से उपगत लाभ सभी सहभागियों को पहुँचेंगे। प्रवर्तन [अर्थात् लोगों को नियम मानने के लिए बाध्य किया जाना] सुनिश्चित किए जाने के बिना लोग अनुबंध एवं लेन-देन करने से कतराएंगे। तीसरे, उन सार्वजनिक हित-वस्तुओं की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित करने के लिए सामूहिक कार्यवाही आवश्यक होती है जिनके माध्यम से निजी आर्थिक क्रियाकलाप होते हैं। अपराध एवं हिंसा जैसी 'सार्वजनिक अहित' अर्थात् सामाजिक बुराइयों पर नियंत्रण भी समान रूप से महत्त्वपूर्ण है जो निजी आर्थिक क्रियाकलाप हेतु प्रोत्साहनों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं।

14.3.2 शासनार्थ संस्थाएँ

'नव-सांस्थानिक अर्थशास्त्र' का उदय (देखें ऊपर उपभाग 14.2.3 में उल्लिखित 'नव-सांस्थानिक दृष्टिकोण') 'राज्य-विफलता' के संदर्भ में हुआ है जितना कि 'बाज़ार-विफलता' के संदर्भ में। कहा जाता है कि किसी भी देश की संवृद्धि एवं विकास में अंतर महज़ संसाधन भिन्नताओं (यथा, भौतिक पूँजी, मानव पूँजी एवं प्रौद्योगिकी में अंतर) की वजह से नहीं होता, ये तो समीपस्थ कारण मात्र होते हैं। कहना होगा कि 'संस्थाएँ' ही आर्थिक संवृद्धि एवं विकास में भिन्नताओं के लिए बुनियादी कारण होती हैं। न्यू इंस्टीट्यूशनल स्कूल के एक प्रभावशाली व्यक्ति [देखें डी.नॉर्थ (1990)] के अनुसार, 'संस्थाएँ ही किसी समाज में खेल के नियम होती हैं।' अन्य शब्दों में, वे ही मानव अंतर्क्रियाओं को रूपायित करने हेतु मानवीय रूप से अभिकल्पिक संरोध होती हैं। इस दृष्टिकोण से, संस्थाओं के तीन महत्त्वपूर्ण अभिलक्षण होते हैं, यथा – (i) 'मानवीय रूप से अभिकल्पित' (मानव नियंत्रण से इतर भौगोलिक कारकों सरीखी अन्य संस्थाओं से भिन्न), (ii) 'खेल के नियम' (जो कि मानव व्यवहार पर अंकुश लगाते हैं) और (iii) प्रोत्साहनों के माध्यम से उनका प्रमुख प्रभाव।

उक्त विचार-पद्धति (न्यू इंस्टीट्यूशनल स्कूल) 'मुक्त बाज़ार' एवं 'निजी संपदा अधिकारों के संरक्षण' पर ज़ोर देती है। इन दोनों ही गुणों को आर्थिक विकास हेतु अनिवार्य शर्तों के रूप में देखा जाता है। समालोचकों का कहना है कि राज्य की सीमित भूमिका के साथ, मुक्त बाज़ारों में विश्वास, सांस्थानिक दृष्टिकोण की एक प्रमुख कमी है। उनके अनुसार, नव-सांस्थानिक दृष्टिकोण स्वयं संस्थाओं में परिवर्तनों के एक त्रुटिपूर्ण बोध से ग्रस्त है। इससे 'नव-सांस्थानिक दृष्टिकोण' और 'शासन पर आग्रह' के बीच संबंध का मुद्दा उठता है। यहाँ निहित संबंध को विकास प्रक्रिया में और स्वत्व अधिकारों के संरक्षण पर ज़ोर में राज्येत्तर संस्थाओं की भूमिका के रूप में देखा जाता है। शासन संबंधी मुद्दों का विश्लेषण, इसीलिए, कहीं अधिक व्यापक है, जिसके दायरे में न सिर्फ स्वामित्व अधिकार और उद्यम की स्वतंत्रता आते हैं बल्कि लोकतंत्र हेतु अव्यक्त नियामक राजनीतिक पूर्वाग्रह भी आता है। अन्य शब्दों में, 'शासनार्थ संस्थाओं' की परिधि में कहीं अधिक वृहद् आयाम आते हैं।

बोध प्रश्न 2 (दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।)

1) 'आर्थिक शासन' पदबंध किससे संबंधित है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) अविनाश दीक्षित (2009) के अनुसार, 'सुशासन' को सुनिश्चित करने के लिए तीन अनिवार्य शर्तें कौन-सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) 'शासनार्थ संस्थाएँ' पदबंध से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

14.4 शासन सूचकांक

स्थूलतः, शासन के मापदंड दो प्रकार के होते हैं। इनमें एक है – 'वस्तुपरक मापदंडों' की शृंखला और दूसरी 'आदर्शपरक मापदंडों' की शृंखला। शासन के वस्तुपरक सूचकांक मुख्यतः किसी राजनीतिक संस्था की अवस्था (लोकतंत्र, तानाशाही), संस्थागत शासन-प्रणाली का प्रकार, राजनीतिक अस्थिरता एवं हिंसा की घटना तथा कार्यकारी संरोधों (परस्पर निगरानी) की विद्यमानता। इन मापदंडों के लिए आँकड़ों के स्रोत हैं– राजतंत्र का डेटाबेस और दि इकनोमिस्ट इंटेलिजेंस यूनिट द्वारा जारी 'लोकतंत्र सूचकांक'। इन वस्तुपरक मापदंडों की बड़ी कमी यह है कि ये शासन के मूल्यांकन हेतु निर्णायक संस्थाओं की गुणवत्ता पर कोई जानकारी दिए बिना ही शासन का एक संकीर्ण परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत कर देते हैं।

शासन के आदर्शपरक मापदंडों के माध्यम से उपर्युक्त वस्तुपरक मापदंडों का एक विकल्प भी है, जो कि विशेषज्ञ मतों एवं अवबोधन सर्वेक्षणों पर आधारित होते हैं। यह ब्रुकिंग्स इंस्टीट्यूशन और विश्व बैंक द्वारा संयुक्त रूप से तैयार किए जाने वाले विश्वव्यापी शासन सूचकांकों (WGI) के डेटाबेस पर आधारित होता है। ये सूचकांक (WGI) उन परंपराओं एवं संस्थाओं के आयाम से शासन तक पहुँचते हैं जिनके द्वारा किसी देश में प्राधिकार का प्रयोग किया जाता है। तद्नुसार परिभाषित किए जाने पर, शासन में तीन प्रमुख आयाम होते हैं; यथा (क) वह प्रक्रिया जिससे सरकारें चुनी जाती

हैं, उन पर नज़र रखी जाती है और उन्हें बदला जाता है; (ख) सही नीतियाँ प्रभावपूर्ण ढंग से निरूपित एवं क्रियान्वित करने हेतु सरकार की क्षमता; तथा (ग) उन संस्थाओं के प्रति नागरिकों और राज्य के मन में सम्मान जो उनके बीच आर्थिक एवं सामाजिक अंतर्क्रियाएँ नियंत्रित करती हैं। उक्त सूचकांकों (WGI) का डेटाबेस शासन के कुछ संश्लिष्ट सूचक प्रदान करता है। ये संकेतक निम्नलिखित से संबद्ध होते हैं – (i) अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता (VA), (ii) राजनीतिक स्थिरता एवं हिंसा/आतंकवाद की अविद्यमानता (PV), (iii) सरकार की प्रभावोत्पादकता (GE), (iv) विनियामक गुणवत्ता (RQ), तथा (v) भ्रष्टाचार पर नियंत्रण (CC)। इस भाग के अगले अंश में हम उक्त (WGI) डेटाबेस पर आधारित वर्ष 2019 हेतु नवीनतम समंकों (अथवा श्रेणियों) का प्रयोग कर, एक तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में, इन पाँचों 'शासन संसूचकों' में से प्रत्येक के अनुसार भारत के कार्य-निष्पादन का विश्लेषण करेंगे। यहाँ प्रयुक्त सूचक (WGI) आँकड़े शतमंक के रूप में हैं, यथा– 0 से 100 तक की श्रृंखला में, जहाँ शून्य निकृष्टतम दर्शाता है और 100 सर्वोत्तम।

अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता (VA) वह सीमा दर्शाता है जहाँ तक किसी देश के नागरिक अपनी सरकार चुनने में भागीदारी हेतु सक्षम होते हैं, और साथ ही, उन्हें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, सहचर्य की आज़ादी और स्वतंत्र संचार माध्यमों का लाभ मिलता हो। भारत अपने संविधान में एक मूलभूत अधिकार के रूप में भाषण की स्वतंत्रता संबंधी प्रावधान के साथ, इस संदर्भ में अपने पड़ोसी देशों के मुकाबले एक अपेक्षाकृत उच्च स्थान (60.1) पर है। फिर भी वह नॉर्वे (100), डेनमार्क (98) अथवा स्वीडन (97.5) जैसे शीर्षस्थ देशों के आस-पास कहीं नहीं ठहरता। 'राजनीतिक स्थिरता एवं हिंसा/आतंकवाद की अविद्यमानता' संबंधी सूचक इस संभावना विषयक अवबोधन का प्रग्रहण करता है कि असंवैधानिक अथवा हिंसक साधनों से सरकार अस्थिर होगी अथवा उखाड़ फेंकी जाएगी, जिनमें राजनीतिक रूप से प्रेरित हिंसा एवं आतंकवाद शामिल हैं। इस मोर्चे पर भारत का समंक (14.8) इस क्षेत्र स्थिरता की एक बेहद कमज़ोर स्थिति दर्शाता है, न सिर्फ नॉर्वे (90.5) अथवा स्वीडन (80.5) जैसे उच्च समंक वाले देशों की तुलना में, बल्कि नेपाल (23.2) और श्रीलंका (40.5) की तुलना में भी। 'सरकार की प्रभावोत्पादकता' विषयक सूचक लोकसेवाओं की गुणवत्ता, असैनिक सेवा की गुणवत्ता और राजनीतिक दबाव से इसकी स्वतंत्रता की कोटि संबंधी

तालिका 14.2 : शासन संसूचकों द्वारा चुनिंदा अर्थव्यवस्थाओं का तुलनात्मक वर्णन

शासन संसूचक	भारत	बांग्लादेश	नेपाल	पाकिस्तान	श्रीलंका	चीन
VA	60.1	27.6	39.4	25.6	46.8	8.9
PV	14.8	13.8	23.2	3.3	40.5	36.7
GE	63.9	21.6	16.8	26.9	45.2	69.7
RQ	55.3	28.4	33.7	27.9	55.8	48.1
CC (WGI)	49.5	16.8	27.4	23.6	43.3	45.7
CPI (TI)	41	26	34	32	38	41
	(80)	(146)	(113)	(120)	(93)	(80)

स्रोत : 'भ्रष्टाचार संसूचक' को छोड़कर WGI जिसके लिए के स्रोतों से समंक/श्रेणी दर्शाए गए हैं।

नोट : कोष्ठक में दिए गए अंक ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल (TI) द्वारा (CPI) के लिए देश की स्थिति (180 में से सर्वेक्षण किए गए देश) दर्शाते हैं।

अवबोधनों का प्रग्रहण करती है। यह नीति-निरूपण एवं क्रियान्वयन की गुणवत्ता और ऐसी नीतियों के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता संबंधी विश्वसनीयता भी दर्शाती है। यहाँ विश्लेषण किए गए पाँच शासन सूचकों में से भारत का उच्चतम समंक (63.9) 'सरकार की प्रभाविता' के मामले में है। इस संबंध में चीन का किंचित् बेहतर स्थान है (69.7)। जबकि अन्य दक्षिण एशिया पड़ोसी देशों में यह काफी कम है। परंतु उदाहरण बने अब भी स्कैंडीनेबियन देश ही हैं जो 96 से ऊपर समंक दर्शाते हैं (99 के साथ फिनलैंड सबसे ऊपर)।

विनियामक गुणवत्ता' (RQ) सरकार की दक्षता को दर्शाता एक अन्य महत्त्वपूर्ण सूचक है। यह ऐसी सही नीतियाँ एवं विनियम निरूपित एवं क्रियान्वित करने हेतु सरकार की क्षमता संबंधी अवबोधनों का प्रग्रहण करता है जो निजी क्षेत्र के विकास को अनुमति एवं प्रोत्साहन प्रदान करते हों। यह सूचक दर्शाता है कि अधिकांश विकासशील एवं निम्न-मध्य स्तर के देश एक अपेक्षाकृत निकृष्ट विनियामक गुणवत्ता से पीड़ित होते हैं। अपने 48–55 की शृंखला में किसी समंक के साथ भारत, चीन एवं श्रीलंका, बांग्लादेश, पाकिस्तान एवं नेपाल से बेहतर हैं। निजी क्षेत्र पर राज्य की विनियामक क्षमता में बलहीनता विनियामक प्रग्रहण, भ्रष्टाचार एवं असमानता के स्रोत के रूप में काम कर सकती है।

जैसा कि हमने उपभाग 14.2.1 में देखा, भारत और श्रीलंका दोनों ही 'कुंठित लोकतंत्रों' की श्रेणी में आए, जबकि बांग्लादेश, नेपाल और पाकिस्तान और चीन 'संकर शासन-व्यवस्थाओं' के रूप में नज़र आए। यहाँ हम देखते हैं कि इन देशों के लिए इसी प्रकार की श्रेणियाँ 'कानून का शासन' विषयक सूचक के लिए भी हैं। यह सरकार और शासन संबंधी दो आयामों के बीच घनिष्ठ सहबद्धता भी दर्शाता है। चीन की 'कानून का शासन' स्थिति एवं सत्तावादी शासन-व्यवस्था के रूप में उसके चित्रण से अपेक्षाकृत बेहतर लगती है।

भ्रष्टाचार नियंत्रण (CC) : यह विनियामक गुणवत्ता से गहरा जुड़ा एक अन्य शासन सूचक है। हाल ही में, दुनिया भर में (इस बात पर ध्यान दिए बगैर कि देश विकसित है विकासशाली, वह लोकतंत्र है या सत्तावादी) व्यापक असंतोष और विरोध-प्रदर्शनों का कारण भ्रष्टाचार और असमानता रहे हैं। भ्रष्टाचार एक काफी विकट शासन दोष है क्योंकि यह असमानता को बढ़ा सकता है। इसके अलावा, भ्रष्टाचार 'व्यापार करने की लागत' बढ़ाकर विकास को गंभीर रूप से आहत कर सकता है। यह उच्चतर असमानता और राजनीतिक अस्थिरता की ओर अग्रसर करते हुए निवेश को हतोत्साहित कर आर्थिक संवृद्धि को न्यून कर देता है। भ्रष्टाचार कीमतों में विकृति लाकर निर्धन वर्ग और सर्वाधिक असुरक्षित वर्ग पर एक विषम प्रभाव छोड़ता है। यह स्वास्थ्य एवं शिक्षा जैसी जन-सेवाओं की लागत बढ़ाकर उनकी सुलभता घटा देता है। भ्रष्टाचार सरकार में विश्वास कम कर सामाजिक अनुबंध को आघात पहुँचाता है। भ्रष्टाचार अनेक रूपों में दिखाई देता है। उदाहरण के लिए, भ्रष्टाचार सरकारी संविदाओं में विजेताओं का पक्षपातपूर्ण निर्धारण कर सकता है, जिससे लाभ सरकारी पदाधिकारियों के मित्रों व संबंधियों को ही चला जाएगा। अथवा, यह समग्र आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालकर नीति-निरूपण एवं क्रियान्वयन पर दूरगामी प्रभाव के साथ नियामक निकायों पर कब्ज़ा कर सकता है। अतएव, सभी प्रकार के भ्रष्टाचार से निबटना बेहद ज़रूरी है ताकि प्रगति एवं धारणीय परिवर्तन का सिलसिला निर्बाध चलता रहे।

उपर्युक्त कारकों की वजह से भ्रष्टाचार पर लगाम कसने का महत्त्व ज्ञात होने पर, उक्त सूचकों (WGI) के अलावा भी अनेक अभिकरण सामने आए हैं जो देशों में भ्रष्टाचार की सीमा मापते हैं। यहाँ, हम ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल (TI) द्वारा प्रकाशित दो स्रोतों, यथा– उक्त संसूचक (WGI) और 'करप्शन पर्सेप्शन इंडेक्स' (CPI) से लिए गए सूचक प्रस्तुत करेंगे। उक्त संस्था (TI) द्वारा किए गए सर्वेक्षण में 180 देश शामिल किए गए, जो कि विश्व बैंक/ब्रुकिंग्स के भ्रष्टाचार नियंत्रण (CC) द्वारा लिए गए देशों से कहीं अधिक हैं। उक्त सूचकों (WGI) का यह संसूचक (CC) उस सीमा विषयक अवबोधनों का प्रग्रहण करता है जहाँ तक निजी लाभ के लिए जनसत्ता का प्रयोग किया जाता है (भ्रष्टाचार के छोटे-बड़े सभी रूप शामिल करने) और साथ ही, संभ्रांत वर्ग एवं निजी हितों द्वारा 'राज्य का प्रग्रहण' भी इसमें समाहित है। जैसा कि अन्य संकेतकों (WGI संसूचकों) के उदाहरण में मिलता है, 'भ्रष्टाचार नियंत्रण' में भी भारत और श्रीलंका का स्थान निकृष्ट है, परंतु वह बांग्लादेश, नेपाल व पाकिस्तान जैसे अन्य पड़ोसियों से बेहतर है। चीन, 'अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता' के सिवा, भ्रष्टाचार नियंत्रण (CC) समेत सभी संसूचकों में भारत व श्रीलंका के साथ ही चल रहा है। अपने 100 समंक के साथ फिनलैंड 'शून्य भ्रष्टाचार' दर्शाता है।

उक्त संस्था (TI) का भ्रष्टाचार अवबोधन सूचकांक (CPI) अनेक ऐसे स्रोतों से आँकड़े एकत्र करता है जो सार्वजनिक क्षेत्र में भ्रष्टाचार के स्तर पर व्यापारी वर्ग एवं देश के विशेषज्ञों द्वारा किए गए अवबोधन प्रदान करते हों। उक्त सूचकांक (CPI 2019) में भ्रष्टाचार पर अवबोधनों (विगत दो वर्ष की अवधि के संदर्भ के साथ) का प्रग्रहण करने के लिए 12 विभिन्न संस्थाओं से 13 विभिन्न आँकड़ा स्रोतों का प्रयोग किया। ये आँकड़े 0 से 100 के पैमाने पर किसी समंक (जितना ऊँचा समंक उतना ही नीचा भ्रष्टाचार) हेतु मानकीकृत होते हैं। उक्त (TI) आँकड़ों से भारत व उसके पड़ोसियों की आपेक्षिक भ्रष्टाचार स्थिति भी उजागर होती है, जहाँ वे अपने अपेक्षाकृत निम्न समंक दर्शाते हैं (यथा, WGI में 49.5 और TI में 41)। जहाँ भारत 'अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता' तथा 'कानून का शासन' में अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति दर्शाता है, चीन 'सरकार की प्रभावोत्पादकता' तथा 'राजनीतिक स्थिरता' में भारत से बेहतर है। परंतु, यथातथ्य रूप से भ्रष्टाचार सूचकांक के विषयक में दोनों एक ही स्तर पर हैं (TI के अनुसार दोनों ठीक 80 के समंक के साथ)।

आलोचकों के अनुसार, उक्त (WGI) डेटाबेस की कुछ सीमाएँ हैं। प्रथम, यह इसके (WGI के) सूचक अविकलित करने के लिए अनेक भिन्न-भिन्न प्रकार के डेटाबेस प्रयोग करता है। ये अवबोधन सर्वेक्षण अपने भिन्न-भिन्न प्रतिदर्शों पर आधारित होते हैं। इसके अलावा, चूँकि कालांतर में, संसाधन एवं विधियाँ बदलते हैं, एक काल विशेष पश्चात् विभिन्न देशों के बीच तुलनाएँ कठिन होती हैं। तथापि, यह (WGI) स्रोत अपनी कार्य प्रणाली उजागर करने में पारदर्शी होता है (जैसे, आँकड़ों की त्रुटियाँ दूर करने हेतु 'अव्यक्त चर' दृष्टिकोण अपनाया जाना। दूसरे, कहा जाता है कि किसी दृश्य घटना संबंधी अवबोधन और उसके वास्तविक माप के बीच अंतर होता है। कहा जा सकता है कि अवबोधन निदर्श में अपनी स्थिति से भिन्न होते हैं, हालाँकि पूर्ववर्ती सर्वेक्षणों से प्राप्त अनुभवों के आधार पर समुचित समंजन प्रयास किए जाते हैं। आलोचना का तीसरा बिंदु यह है कि चूँकि 'शासन' की कोई सर्व प्रयोजन परिभाषा नहीं है, इसे सीधे नहीं मापा जा सकता। परंतु किसी ऐसी दृश्य घटना को मापते समय जिसका सीधे नहीं प्रेक्षण नहीं किया जा सकता, प्रतिनिधि चरों का प्रयोग किया

जाना आम चलन है। अतः, प्राविधिक रूप से, उक्त सूचकांक (WGI), अपनी आलोचनाओं के बावजूद, अपना महत्त्व बनाये हुए है।

बोध प्रश्न 3 (दिए गए स्थान में अपना उत्तर लगभग 50–100 शब्दों में लिखें।)

1) वे प्रमुख कारक कौन-से हैं जिनसे विश्वव्यापी शासन सूचक (WGI) डेटाबेस द्वारा प्रदत्त सूचकांक संबद्ध होते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारत किस प्रकार अपने पड़ोसी देशों से बेहतर समंक दर्शाता है? यह क्या इंगित करता है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) 'सरकार की प्रभावोत्पादकता' (GE) संबंधी शासन सूचक क्या दर्शाता है और इस मोर्चे पर भारत और चीन किस प्रकार तुलनीय हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

4) ऐसे दो अभिकरण बताएँ जो शासन सूचक के एक कारक के रूप में भ्रष्टाचार को मापते हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

5) विश्वव्यापी शासन सूचक (WGI) डेटाबेस के प्रति की जाने वाली आलोचनाएँ कौन-सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

14.5 सार-संक्षेप

सरकार को तीन प्रकार का माना जाता है जिनमें से लोकतांत्रिक रूप को व्यापक रूप से विकासोन्मुखी स्वीकार किया जाता है। तिस पर भी, यद्यपि अधिकाधिक देश लोकतांत्रिक होते जा रहे हैं, अनेक देश आज भी सत्तावादी शासन-प्रणाली अपनाए हुए हैं, परंतु अनेक लोकतांत्रिक देश (भारत समेत) 'कुंठित लोकतंत्र' की श्रेणी में आते हैं – अर्थात् ये अनेक मोर्चों पर कमियाँ दर्शाते हैं। 'शासन' शब्द के दायरे में अनेक आयाम आते हैं, जैसे– राजनीतिक शासन-प्रणाली का रूप, वह प्रक्रिया जिससे प्राधिकार का प्रयोग किया जाता है, नीतियाँ अभिकल्प एवं क्रियान्वित करने हेतु क्षमता, आदि। 'शासन' शब्द 'लोकतांत्रिक उत्तरदेयता' हेतु सरकार व नागरिक समाज दोनों का सामंजस्यपूर्ण सहअस्तित्व इंगित करता है। 'शासन' शब्द 'सुशासन' से भिन्नता दर्शाता है, जहाँ परवर्ती एक ऐसा 'मतैक्य-आधारित निर्णयन' सुनिश्चित कर देता है जिसमें दरिद्रतम एवं सर्वाधिक असुरक्षित वर्ग का अभिव्यक्ति को भी यथायोग्य सम्मान दिया जाता है। विकास संकेतकों के साथ सुशासन के सशक्त अनुबंधनों के मद्देनज़र, हाल के वर्षों में अनेक 'शासन सूचक' विकसित किए गए हैं। इसके आधार पर ही देशों का श्रेणीकरण किया जाता है। विशेषकर, 'भ्रष्टाचार अवबोधन सूचक' (CPI) के लिहाज से, भारत और चीन समान स्तर पर हैं, यद्यपि भारत 'अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता सूचक' की दृष्टि से चीन से कहीं बेहतर स्थिति में है।

14.6 शब्दावली

अधिनायकवाद : तानाशाही अर्थात् ऐसी सत्तावादी शासन-प्रणाली जिसमें सत्ता का संकेंद्रण कुछ ही हाथों में रहता है।

लोकतंत्र की तरंगें : अपने लंबे इतिहास के साथ राजतंत्र से प्रतिनिधि सरकारों को सत्ता का हस्तांतरण : वर्ष 1688 में इंग्लैंड की गौरवपूर्ण क्रांति, वर्ष 1789 में फ्रांसीस क्रांति और वर्ष 1980 के उत्तरार्ध में सोवियत संघ का विघटन।

लोकतंत्र सूचक : द इकोनोमिस्ट की इंटेलीजेंस यूनिट द्वारा विकसित एवं प्रकाशित एक संकेतक। यह 165 से भी अधिक देशों का सर्वेक्षण करता है और अपना लोकतांत्रिक सूचकांक पाँच श्रेणियों के आधार पर आकलित करना है, यथा– चुनाव प्रक्रिया एवं महाधिक्य, सरकार का प्रकार्यात्मकता, राजनीतिक भागीदारी, राजनीतिक सांस्कृतिक तथा नागरिक स्वतंत्रताएँ या अधिकार।

शासन : इस शब्द में राज्य व उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर की संस्थाएँ शामिल होती हैं, अर्थात् इसमें अनेक राज्येत्तर संस्थाएँ भी आती हैं।

सुशासन : शासन का वह रूप जो ऐसे समाज में जहाँ गरीब और असुरक्षित लोगों की आवाज़ भी सुनी जाती हो, एक व्यापक सहमति पर आधारित 'राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक प्राथमिकताएँ' सुनिश्चित कर देता हो।

शासन संसूचक : विश्वव्यापी शासन सूचक (WGI– ब्रुकिंग्स एवं विश्वबैंक द्वारा विकसित) तथा भ्रष्टाचार अवबोधन सूचक (ट्रांस्पेरेंसी इंटरनेशनल) जैसे संकेतक या सूचक आदि।

14.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) UN (2016). Governance and Institutions, Chapter VI, in World Economic and Social Survey 2014/2015, New York.

2) World Bank (1997). Governance and sustainable Development, UNDP, New York.

14.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) सरकार किसी भी देश में वैध सत्ता प्रयोग हेतु किसी प्राधिकरण का नाम होता है। शासन का अर्थ होता है– लोकतांत्रिक राज्य की वह अवधारणा जिसमें 'राज्य' दक्षतापूर्वक कार्य करने हेतु बाज़ारों के सहायक की भूमिका निभाता है।

2) भारत एक कुंठित लोकतंत्र होने के बावजूद अपने पाँच पड़ोसियों से बेहतर स्थिति दर्शाता है जो कि कोष्ठकबद्ध श्रेणी के साथ निम्नवत् है– भारत (51), श्रीलंका (69), बांग्लादेश (80), नेपाल (92), पाकिस्तान (108) तथा चीन (153)।

3) लोकतंत्र के प्रति एक आलोचना इस आधार पर है कि यह 'पुनर्वितरणीय माँगें उत्पन्न कर देता है जो कि निवेश प्राथमिकता को आघात पहुँचाकर संवृद्धि को कुप्रभावित करती हैं। इस आलोचना का कोई महत्त्व नहीं है क्योंकि 'अनेक लोकतांत्रिक देशों में संवृद्धि दरें (भारत समेत) अनेक सत्तावादी देशों से कहीं अधिक ऊँची हैं'।

4) 'शासन' लोकतांत्रिक राज्य की एक अवधारणा का नाम है। इस पदबंध के दायरे में राज्य व उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर की संस्थाएँ भी आती हैं, अर्थात् नागरिक समाज जैसी राज्येत्तर संस्थाएँ। शासन, तद्नुसार, किसी सरकार की परिधि से कहीं अधिक विस्तार लिए होता है। शासन शब्द में 'लोकतांत्रिक उत्तरदेयता' का एक अव्यक्त संदर्भ होता है।

5) सुशासन 'सहभागितापूर्ण, पारदर्शी और उत्तरदेय' होता है। यह अपने अधीन 'समावेशी वृद्धि' के सिद्धांतों समेत दरिद्रतम एवं सर्वाधिक असुरक्षित लोगों की अभिव्यक्तियों को ध्यान में रखता है।

बोध प्रश्न 2

1) इसका अर्थ है– आर्थिक गतिविधियों एवं लेन देन में सहयोग करने के लिए वैध एवं सामाजिक संस्थाओं का प्राधार एवं प्रकार्यात्मकता।

2) संपदा अधिकारों की सुरक्षा; अनुबंधों का प्रवर्तन सुनिश्चित करने हेतु संस्थाएँ तथा सार्वजनिक वस्तुओं के प्रभावशाली प्रावधान हेतु सामूहिक कार्रवाई।

3) ये महज 'संपदा अधिकारों' एवं 'उद्यम की स्वतंत्रता' से कहीं अधिक व्यापक होते हैं। इनमें लोकतंत्र हेतु एक राजनीतिक पूर्वाग्रह शामिल होता है।

बोध प्रश्न 3

1) इसका संबंध इन बातों से है – (i) अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता (VA), (ii) राजनीतिक स्थिरता एवं हिंसा/आतंकवाद की अविद्यमानता (PV), (iii) सरकार की प्रभाविता (GE), (iv) विनियामक गुणवत्ता (RQ), तथा (v) भ्रष्टाचार पर नियंत्रण (CC)।

2) अभिव्यक्ति एवं उत्तरदेयता। यह उस सीमा को दर्शाता है जहाँ तक किसी देश के नागरिक अपनी सरकार चुनने में भागीदारी निभाने में सक्षम होते हैं, और साथ ही, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, साहचर्य की स्वतंत्रता एवं स्वतंत्र संचार माध्यमों का भी लाभ उठा सकते हों।

3) यह लोक सेवाओं की गुणवत्ता एवं राजनीतिक दवाबों से अपनी स्वतंत्रता विषयक अवबोधन का प्रग्रहण करता है। यह नीति-निरूपण एवं क्रियान्वयन के प्रति अपनी वचनबद्धता में सरकार की विश्वसनीयता का भी प्रग्रहण करता है। चीन (69.7) इस संबंध में भारत (63.9) के मुकाबले थोड़ा आगे है।

4) विश्वव्यापी शासन सूचकांक (WGI) का 'भ्रष्टाचार नियंत्रण' (CC) जो कि ब्रुकिंग्स एवं विश्व बैंक द्वारा जारी किया जाता है, तथा ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल द्वारा जारी भ्रष्टाचार अवबोधन सूचकांक (CPI)।

5) यह विभिन्न डेटाबेस प्रयोग करता है; इसके सर्वेक्षण अपने प्रतिदर्श अभिलक्षणों में भिन्न-भिन्न होते हैं जो कि विभिन्न देशों के बीच तुलना को कठिन बना देता है; इत्यादि।

Statistical Appendix

Table 3.2 (a): Sectoral Share (%) of GDP: 2013-21 (base 2011-12)

Year	Agriculture	Industry	Services
2013-14	20.7	28.3	51.1
2016-17	18.3	28.4	53.3
2019-20 (PE)	17.3	27.5	55.2
2020-21 (AE)	18.8	26.9	54.3

Source: Table 1.3 B, A7, Economic Survey 2020-21.

Note: PE: Provisional Estimates. AE: Advanced Estimates

Table 3.3: Domestic Savings as Percentage of GDP: 2012-19 (2011-12 Series)

Sector	2011-12	2014-15	2017-18	2018-19
Household	23.6	19.6	19.2	18.2
Private Corporate	9.5	11.7	11.6	10.4
Public Sector	1.5	1.0	1.7	1.5
Total	34.6	32.2	30.5	30.1

Source: Table 1.9, A 26, Vol. 2, Economic Survey 2020-21.

Suggested Readings

1) Athukorala P & Sen K (2002). *Saving, Investment, and Growth in India*, Oxford University Press, New Delhi.

2) Balakrishnan, P (2010). Economic Growth in India: History and Prospect, Oxford University Press.

3) Basu K. (Ed.) (2008). *The Oxford Companion to Economics in India,* Oxford University Press, USA.

4) Basu, Kaushik and Annemie Maertens (eds.) (2011). *The New Oxford Companion to Economics in India,* OUP, New Delhi.

5) Dreze, Jean and Amartya Sen (2013). An *Uncertain Glory: India and Its Contradictions, Allen Lane,* Penguin Books, London.

6) Gupta Akhil (2012). *Red Tape: Bureaucracy, Structural Violence and Poverty in India,* Duke University Press.

7) Human Development Report, (2016). UNDP, New York, NY 10015.

8) Kapila, Uma (ed.), (2007). Indian Economy Since Independence, 18th Edition, Academic Foundation, Delhi.

9) Nayyar, Deepak (2019). *Resurgent Asia: Diversity in Development,* Oxford University Press, New Delhi.

10) Piketty, Thomas (2015). *The Economics of Inequality,* Harvard University Press.

11) Rajagopalan, R. (2015). *Environmental Studies: from Crisis to Cure* (No. Ed. 3). Oxford University Press.

12) Varghese N.V. and G. Mallik, Eds. (2017). India Higher Education Report 2015, Routledge, 2017.